



**एम.ए मराठी  
सत्र - III (CBCS)**

**अभ्यासपत्रिका क्र. - ९  
दलित साहित्य  
(Dalit Sahitya)**

**विषय कोड: 99021**

|                                                               |                                                                                 |                                                                                                  |
|---------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------------------------------------------------------|
| <b>डॉ. सुहास पेडणेकर</b><br>कुलगुरु<br>मुंबई विद्यापीठ, मुंबई | <b>प्राध्यापक रवींद्र कुलकर्णी</b><br>प्रभारी कुलगुरु<br>मुंबई विद्यापीठ, मुंबई | <b>प्राध्यापक प्रकाश महानवर</b><br>संचालक<br>दूर व मुक्त अध्ययन संस्था<br>मुंबई विद्यापीठ, मुंबई |
|---------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------------------------------------------------------|

|                                |                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                    |
|--------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| <b>कार्यक्रम समन्वयक</b>       | <b>: प्रा. अनिल बनकर</b><br>कला शाखा प्रमुख<br>दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई                                                                                                                                                                                                                                                   |
| <b>अभ्यास समन्वयक व संपादक</b> | <b>: प्रा. मनिषा-पवार बनकर</b><br>सहाय्यक प्राध्यापक मराठी विभाग<br>दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई                                                                                                                                                                                                                              |
| <b>लेखक</b>                    | <b>: प्रा. मनिषा-पवार बनकर</b><br>सहाय्यक प्राध्यापक मराठी विभाग<br>दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई.<br><b>: डॉ. सारीपुत्र तुपेरे</b><br>सहाय्यक प्राध्यापक मराठी विभाग<br>संगमेश्वर महाविद्यालय, सोलापूर<br><b>: प्रा. भाऊसाहेब नन्नवरे</b><br>सहाय्यक प्राध्यापक मराठी विभाग,<br>के. एम .सी महाविद्यालय,<br>खोपोली, जि. रायगड. |

डिसेम्बर २०२१, मुद्रण - १

ISBN - 978-93-91735-06-7

|                |                                                                                               |
|----------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------|
| <b>प्रकाशक</b> | <b>: संचालक, दूर आणि मुक्त अध्ययन संस्था.</b><br>मुंबई विद्यापीठ, विद्यानगरी, मुंबई- ४०० ०९८. |
|----------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------|

|                                                                                 |
|---------------------------------------------------------------------------------|
| <b>अक्षर जुळणी आणि मुद्रण</b><br>मुंबई विद्यापीठ मुद्रणालय<br>विद्यानगरी, मुंबई |
|---------------------------------------------------------------------------------|

## अनुक्रमणिका

| अध्याय क्र. | नाव                                                                             | पृष्ठ क्र. |
|-------------|---------------------------------------------------------------------------------|------------|
| १           | दलित साहित्याचे स्वरूप आणि वैशिष्टे - प्रा. मनिषा पवार बनकर.....                | १          |
| २           | दलित साहित्याच्या चळवळीची पार्श्वभूमी - प्रा. डॉ. सारीपुत्र तुपेरे .....        | २०         |
| ३           | सुरुंग (काव्यसंग्रह) व सूर्यस्तूप (कथासंग्रह) - प्रा. डॉ. भाऊसाहेब नन्नवरे..... | ४८         |

एम. ए. मराठी  
सत्र - III (CBCS)  
अभ्यासपत्रिका क्र. - ९  
दलित साहित्य

## SYLLABUS

सत्र : ३

अभ्यासपत्रिका क्रमांक ९ : ५ – दलित साहित्य (Dalit Sahitya)

उद्दिष्टे : मराठी साहित्य-संस्कृतिक्षेत्रात १९६० नंतरच्या दशकात दलित साहित्याची एक वाङ्मयीन व सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूपाची चळवळ सुरू झाली. या चळवळीतून निर्माण झालेल्या दलित साहित्याने मराठी साहित्यात मोलाची भर घातलेली आहे. अशा महत्वाच्या साहित्यप्रवाहाचा अभ्यास विद्यापीठीय स्तरावर होणे आवश्यक ठरते. या दृष्टीने दलित साहित्याची वाङ्मयीन व सामाजिक/सांस्कृतिक पार्श्वभूमी, दलित साहित्याची संकल्पना व स्वरूप, त्यातील विद्रोहाची जाणीव व तिचा साहित्यिक आविष्कार, या साहित्यप्रवाहातील विविध साहित्यप्रकार, तसेच या साहित्याचे व साहित्यिक चळवळीचे वाङ्मयीन व सामाजिक कार्य इत्यादी गोष्टींचा सुव्यवस्थित अभ्यास करणे, हे या अभ्यासविषयपत्रिकेचे उद्दिष्ट आहे.

घटक १) व्याख्याने-२०, श्रेयांकन-०२

दलित साहित्याचे स्वरूप व वैशिष्ट्य

अ) दलित, दलित जाणीव, दलित साहित्य संकल्पनेविषयीच्या विविध भूमिका.

ब) दलित साहित्याची प्रेरणा, व्याख्या.

घटक २) व्याख्याने-२०, श्रेयांकन-०२

दलित साहित्याच्या चळवळीची पार्श्वभूमी

अ) सामाजिक, राजकीय, सांस्कृतिक, धार्मिक परिस्थिती : वास्तव.

ब) आंबेडकरपूर्व, आंबेडकरी व आंबेडकरोत्तर चळवळी.

क) दलित साहित्य चळवळीचा सामाजिक, सांस्कृतिक, राजकीय चळवळीशी असलेला अनुबंध.

ड) दलित साहित्याची पूर्वपरंपरा.

घटक ३) व्याख्याने-२०, श्रेयांकन-०२

१. सुरुंग, त्र्यंबक सपकाळे.

२. सूर्यस्तूप, आत्माराम गोडबोले.

अंतर्गत परीक्षा-एकूण गुण ४०

१. लेखी परीक्षा २० गुण

२. प्रकल्प लेखन २० गुण (पैकी – प्रकल्प लेखन : १० गुण व प्रकल्पावर आधारित तोंडी परीक्षा : १० गुण)

सत्रान्त परीक्षा-एकूण गुण ६०

वरील अभ्यासक्रमावर १५-१५ गुणांचे चार प्रश्न पर्यायांसह विचारण्यात येतील.

संदर्भग्रंथ :

१. आंबेडकर, डॉ० बाबासाहेब; *अस्पृश्य मूळचे कोण?*, (The Untouchables), (अनु०) कांबळे, बी० सी०;
२. आंबेडकर, डॉ० बाबासाहेब; *जातिभेद निर्मूलन*, (अनु०) गांजरे, मा० फ०; प्रज्ञा प्रकाशन मंडळ, नागपूर, १९७०.
३. आंबेडकर, डॉ० बाबासाहेब; *शूद्र मूळचे कोण होते?*, (अनु०) खैरमोडे, चां० भ०; ठक्कर आणि कं० लि०, मुंबई, १९४६.
४. कऱ्हाडे, सदा; *दलित साहित्य चिकित्सा*, स्वरूप प्रकाशन, औरंगाबाद, २००१.
५. कुलकर्णी, गो० म० (संपा०); *दलित साहित्य : प्रवाह व प्रतिक्रिया*, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, १९८६.
६. खरात, शंकरराव; *दलित वाङ्मय प्रेरणा आणि प्रवृत्ती*, इनामदार बंधू प्रकाशन, पुणे, १९७८.
७. जाधव, रा० ग०; *निळी पहाट*, प्राज्ञपाठशाळा मंडळ, वाई, १९७८.
८. डांगळे, अर्जुन (संपा०); *दलित साहित्य : एक चिंतन*, महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृती मंडळ, मुंबई, १९७८.
९. निंबाळकर, वामन (संपा०); *सामाजिक क्रांतीची दिशा*, (प्राचार्य म० भि० चिटणीस समग्र वाङ्मय), प्रबोधन प्रकाशन, नागपूर, २००७.
१०. पाटील, म० सु०; *दलित कविता*, लोकवाङ्मय गृह, मुंबई, १९८१.
११. पानतावणे, गंगाधर; *दलित साहित्य : चर्चा आणि चिंतन*, साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद, १९९३.
१२. फडके, भालचंद्र; *दलित साहित्य : वेदना आणि विद्रोह*, श्रीविद्या प्रकाशन, पुणे, १९७७ (प्र० आ०), १९८९ (दु० आ०).
१३. बागूल, बाबूराव; *दलित साहित्य : आजचे क्रांतिविज्ञान*, बुद्धिस्ट पब्लिशिंग हाऊस, नागपूर, १९८१.
१४. भगत, दत्ता; *निळी वाटचाल*, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, २००१.
१५. मनोहर, यशवंत; *दलित साहित्य : सिद्धांत आणि स्वरूप*, प्रबोधन प्रकाशन, नागपूर, १९७८.
१६. माटे, श्री० म०; *अस्पृष्टांचा प्रश्न*, दाते, श्री० र०, पुणे, १९३३.
१७. मेश्राम, केशव (संपा०); *विद्रोही कविता*, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, पुणे, १९७८ (प्र० आ०), १९९४ (तृ० आ०).
१८. मेश्राम, केशव व इतर (संपा०); *दलित साहित्याची स्थितिगती*, मराठी विभाग, मुंबई विद्यापीठ आणि अनुभव पब्लिकेशन्स, मुंबई, १९९७.
१९. मेश्राम, योगेन्द्र; *दलित साहित्य – उद्गम आणि विकास*, मंगेश प्रकाशन, नागपूर, १९९८.
२०. रेगे, शां० शं०; *भूमिपर्व*, सुगावा प्रकाशन, पुणे, १९९१.
२१. लिंबाळे, शरणकुमार (संपा०); *शतकातील दलितविचार*, दिलीपराज प्रकाशन, पुणे, २००१.
२२. लिंबाळे, शरणकुमार (संपा०); *प्रज्ञासूर्य*, प्रचार प्रकाशन, कोल्हापूर, १९९१.
२३. वानखेडे, म० ना०; *दलितांचे विद्रोही वाङ्मय*, प्रबोधन प्रकाशन, नागपूर, १९८१.
२४. डोळस, अविनाश; *आंबेडकरी विचार आणि साहित्य*, साकेत प्रकाशन,
२५. नीळकंठ, शं०; *डॉ० बाबासाहेब आंबेडकर आणि दलित वैचारिक वाङ्मय*, सुविद्या प्रकाशन, पुणे, २००५.
२६. Ambedkar, Babasaheb; *Annihilation of Caste*, New Book Company, Bombay, 1936.



## दलित साहित्याचे स्वरूप आणि वैशिष्टे

अ] दलित, दलित जाणीव, दलित साहित्य संकल्पनेविषयीच्या विविध भूमिका.

ब] दलित साहित्याची प्रेरणा व व्याख्या

### घटक रचना

- १.० उद्देश
- १.१ प्रस्तावना
- १.२ दलित साहित्य संकल्पना
  - १.२.१. दलित
  - १.२.२. दलित जाणीव
  - १.२.३ दलित साहित्याच्या विविध भूमिका
  - १.२.४. दलित साहित्याची पूर्वपरांपरा
- १.३ दलित साहित्य स्वरूप आणि वैशिष्टे
  - १.३.१ आत्मशोध
  - १.३.२ नकार
  - १.३.३ विद्रोह
  - १.३.४ समूहमन
  - १.३.५ बांधिलकी
  - १.३.६ विज्ञाननिष्ठा
- १.४ दलित साहित्य प्रेरणा
  - १.४.१ तथागत भगवान बुद्ध
  - १.४.२ संत कबीर
  - १.४.३ महात्मा ज्योतिबा फुले
  - १.४.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर
- १.५ समारोप
- १.६ संदर्भग्रंथ
- १.७ पूरक वाचन
- १.८ नमूना प्रश्नसंच

## १.० उद्देश

१. दलित साहित्यातील "दलित" ही संकल्पना समजावून घेणे.
२. दलित साहित्याच्या विविध भूमिका अभ्यासणे.
३. दलित जाणिवांचा अभ्यास करणे.
४. दलित साहित्याची वैशिष्ट्ये समजतील.
५. दलित साहित्याच्या विविध व्याख्यांचा अभ्यास करणे.
६. दलित साहित्याचे स्वरूप समजावून घेणे.
७. दलित साहित्याच्या पूर्वपरंपरेचा अभ्यास करणे.

## १.१ प्रस्तावना

मराठी साहित्यात १९६० नंतर विविध प्रवाह उदयास आले. या कालखंडानंतर दलित साहित्य, ग्रामीण साहित्य, आदिवासी साहित्य, स्त्रीवादी साहित्य, विज्ञानवादी साहित्य असे अनेक साहित्य प्रवाह उदयास आले. दलित साहित्य प्रवाह हा १९६० नंतर मराठी साहित्यात विकसित झालेला एक ठळक साहित्य प्रवाह आहे. या साहित्य प्रवाहाच्या सध्या "फुले-आंबेडकरी प्रेरणेचे साहित्य" या नावाने ओळखले जाते. या साहित्य प्रवाहाच्या मुळाशी असणाऱ्या प्रेरणा गेल्या शतकातील विविध सामाजिक, राजकीय, सांस्कृतिक घडामोडी आहेत. एकूणच या सर्व साहित्य प्रवाहाच्या मुळाशी शोषणाधिष्ठीत समाजरचना नष्ट झाली पाहिजे, हे समान सूत्र आहे. आणि म्हणूनच सर्व प्रकारच्या शोषण, अन्यायाविरुद्ध आवाज उठवणारे साहित्य या प्रवाहातून निर्माण झाले आहे असे आपणास दिसते. दलित साहित्य भगवान बुद्ध, संत कबीर, महात्मा फुले, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांना प्रेरणा स्थान मानते. भगवान बुद्ध, आणि महात्मा फुले यांना दलित साहित्याचे आदिम प्रेरणा स्थान मानले गेले आहे. दलित चळवळीचे पहिले प्रणेता तथागत बुद्ध हेच आहेत. सर्वांना समान पातळीवर 'माणूस' म्हणून सन्मानाने जगण्याचे संपूर्ण इहवादी, लोकशाहीनिष्ठ, तत्वज्ञान प्रथम भगवान बुद्धाने दिले. दलित साहित्याच्या निर्मितीमागे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे महान विचार आहेत. बाबासाहेबांची विचारांची प्रेरणा घेऊन दलित साहित्य उदयास आले. 'दलित साहित्य' हा वाङ्मय प्रवाह केवळ मराठीतच नाही तर भारतीय स्तरावर स्थापित झाला आहे. जग जवळ येण्याच्या प्रक्रियेला वाढीला लागल्याने 'दलित साहित्य' हा वाङ्मय प्रवाह विश्वस्तारावरही चर्चिला जात आहे. दलित साहित्य दलितांच्या मुक्तीचे हत्यार आहे. दलितांच्या राजकीय हक्कांची कैफियत म्हणून दलितांकडे पाहिले जाते.

दलित साहित्य हे वेगळ्या जाणिवेचे साहित्य मानले जाते. वर्षानुवर्षे गावकूसाबाहेर जीवन जगणाऱ्या अस्पृश्य व अडाणी समजल्या जाणाऱ्या आणि राजकीय, सामाजिक व आर्थिकदृष्ट्या उपेक्षित राहिलेल्या समुहाविषयी ही जाणीव आहे. नकार, दुःख, अपमान, लाचारी, बेकारी, गुलामगिरी, शोषण, वेदना सहन करून हा वर्ग जगत आहे. याविरुद्ध आवाज उठवणे यातून विद्रोह करणे. हे दलित साहित्य शिकवते. तसेच दलित साहित्य हे वर्ण आणि वर्गवादाच्या विरोधी आवाज उठवते. हिंदू धर्मातील चातुर्वर्ण्यचा कडाडून विरोध करते व माणसाला माणूस म्हणून वागवते. दलित साहित्य समता, बंधुता, न्याय आणि प्रज्ञा,

शील, करुणा या मानवी मूल्यांचा पुरस्कार करते. दलित साहित्य समाजवादी, जीवनवादी, नीतिवादी, या भूमिका मांडते. दलित साहित्याने मराठी साहित्यात एक वेगळे स्थान निर्माण केलेले आहे. दलित साहित्याविषयक वेगळी वैचारिक भूमिका विविध वाङ्मय प्रकारातून दलित लेखक समर्थपणे आपले वैचारिक स्वतंत्र मांडू लागले. प्रथम 'कविता' या साहित्यप्रकारातून दलित जाणिवांना मोकळी वाट मिळाली. त्यानंतर कथा, कादंबरी, नाटक, आत्मकथा या प्रकारातून अवतरली. दलित लेखक आपली व्यथा-वेदना सांगण्यासाठी लिहितो. आपलं दुःख, आपले प्रश्न लोकांना समजले पाहिजे, ही त्यांची भूमिका आहे. दलित साहित्य मानवी मूल्यांची आणि मानव अधिकारांची भाषा बोलते. हे साहित्य दलितांच्या चळवळीचे एक अविभाज्य अंग आहे. दलितांच्या समस्यांनी व्यापलेले आहे. हे प्रश्न जातीव्यवस्थेने निर्माण केलेले आहेत दलितांची अवहेलना आणि उपेक्षा ह्यास हे साहित्य नकार देते. दलितांवरील अन्याय-अत्याचारविरुद्ध विद्रोह करते. दलित साहित्यातील जीवन अनुभवविश्व, जाणिवा, वैचारिकता, भाषा, अभिव्यक्ती हे मराठी साहित्यापेक्षा संपूर्ण स्वतंत्र आहे. म्हणून दलित साहित्याचे स्वरूप मराठी साहित्यापेक्षा वेगळे आहे. मराठी साहित्यातील अनेक साहित्यप्रकारातून प्रेरणा घेऊन सामाजिक संस्कृती विरुद्ध आवाज उठवून क्रांतीची प्रेरणा घेतली आहे. दलित साहित्यातील 'दलित, ही संकल्पना, दलित साहित्याच्या विविध भूमिका, दलित साहित्याच्या जाणिवा, दलित साहित्याच्या विविध व्याख्या, दलित साहित्याचे वैशिष्ट्य यांचा अभ्यास करून दलित साहित्याचे स्वरूप व वैशिष्ट्य पुढीलप्रमाणे समजून घेता येईल.

---

## १.२ 'दलित' साहित्य संकल्पना

---

'दलित' साहित्याची संकल्पना समजावून घेतांना सर्वात प्रथम आपण दलित साहित्यातील 'दलित' या शब्दाचा अर्थ व आशय व्यापक भूमिकेतून लक्षात घेतला पाहिजे. दलित साहित्य हे शोषण व्यवस्थेविरुद्ध साहित्यातून विद्रोह व्यक्त करीत असते. समाजातील आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक-राजकीय अन्याय, अस्पृश्यता, जातीयता, यांचा विरोध करण्यासाठी अस्पृश्य वर्गातील साहित्यिक, लेखक, विचारवंतांनी साहित्यातून आपले प्रखर विचार मांडून या व्यवस्थेचा विरोध केला. गावकूसाबाहेरील भोगलेले जीवन दलित साहित्यातून मांडलेले आहे. दलितांनी वेदना, विद्रोह आणि नकाराची भावना यातून प्रकट होऊ लागले. दलित साहित्य सामान्यांच्या शोषित, पिडितांच्या इच्छा, आकांक्षाचे चित्रण करणारे साहित्य आहे आणि म्हणूनच सामान्यांसाठीचा झगडा, त्याचे दैनंदिन प्रश्न, पदोपदी होणारा अपमान त्यांचे अनुभव आणि या सगळ्या घटनांकडे पाहण्याचा जो दृष्टिकोण याचे प्रतिबिंब या साहित्यात घडते. दलित साहित्य ही एक सामाजिक, सांस्कृतिक घटना आहे, केवळ वाङ्मयीन चळवळ नसून जीवनदृष्टी, प्रत्येक माणसाला स्वातंत्र्य, प्रतिष्ठा आणि निर्भय सुरक्षितता याची भूमिका असणारी जीवनदृष्टी आहे. असे दलित साहित्याच्या संदर्भात विचारवंतांनी मांडले आहे. मराठी वाङ्मयाच्या सातशे वर्षांच्या इतिहासात ज्यांना प्रवेशच देण्यात आला नव्हता तो आज ज्या साहित्यातील नायक झाला ते दलित साहित्य होय.

दलित साहित्य हे केवळ आर्थिक शोषणातून दलितांची मुक्ती व्हावी म्हणून आक्रोश करीत नाही तर वर्णव्यवस्थेविरुद्ध लढा पुकारून सामाजिक स्वातंत्र्य, समता व न्याय प्रस्थापित करण्यास वचनबद्ध आहे. माणसाला माणूस म्हणून हवी असणारी प्रतिष्ठाच हिरावून घेतली गेली म्हणून दलितांचे जीवन हा दलित साहित्याचा एक प्रमुख चित्रण विषय ठरला. पण दलित साहित्य एवढ्यापुरते मर्यादित नाही. कारण दलित साहित्यातील 'दलित' हा शब्द

विशिष्ट समूहवाचक किंवा जातिवाचक नाही, तर त्यामध्ये अस्पृश्य दलितांप्रमाणेच बहुजन जातीचाही समावेश आहे. अस्पृश्य दलितांप्रमाणेच या बहुजन जातीचीही सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक इत्यादी क्षेत्रात ही पिळवणूक केली गेली आहे. म्हणून हा बहुजन समाज सामाजिक, सांस्कृतिकदृष्ट्या दलितच ठरतो. म्हणून भारतातील सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक क्षेत्रात ज्यांच्या वाट्याला वंचित, उपेक्षित, अवमानित आणि अन्याय-जुलूमाचे जगणे आले, त्या जाती, वर्ग, गट या सर्वांतील लोकांना 'दलित' म्हणता येईल. आणि त्यांच्या जीवनाचे चित्रण करणाऱ्या साहित्याला दलित साहित्य म्हणता येईल.

दलित साहित्याची संकल्पना समजावून घेतांना आपण 'दलित' या संज्ञेचा अभ्यास करू.

### १.२.१. दलित

'दलित' या शब्दाच्या विविध अर्थासंबंधी दलित व दलितेतर समीक्षकांनी आपले विचार मांडलेले आहेत. अत्यंत विषम मूल्यांवर आधारलेल्या आणि पिळवणुकीचा पुरस्कार करणाऱ्या भारतीय समाज व्यवस्थेत- तिने आखून दिलेल्या चाकोरीप्रमाणे जीवन कंठणारे धनदरिद्री, ज्ञानदरिद्री, असंघटित व म्हणून शक्तिहीन, सत्ताहीन, लाचार-दीन-दुबळे असे जे लोक ते सर्व दलित होय.

#### \* दलित साहित्यातील 'दलित' संज्ञा

'दलित' हा शब्द जन्मापासून शोषित- दलित या अर्थाने वापरला जातो. दलित साहित्यात माणसाला त्याच्या जन्मामुळे वाट्याला येणाऱ्या दुःखाचे चित्रण येते. प्रामुख्याने हे चित्रण पूर्वाश्रमीच्या अस्पृश्यांचे चित्रण आहे. यांच्या दुःखाच्या मुळाशी शोषण करणारा समाज आहे. दलित साहित्यातील "दलित" हा जन्माने दलित आहे, शोषित आहे. बाबुराव बागूल, दया पवार, नामदेव ढसाळ, शंकरराव खरात, यशवंत मनोहर, प्र. ई. सोनकांबळे, हे साहित्यिक जन्माने अस्पृश्य आहेत तर लक्ष्मण माने, भुजंग मेश्राम, लक्ष्मण गायकवाड, दादासाहेब मोरे, असे अनेक साहित्यिक आदिवासी, भटके जमातीचे आहेत. म्हणूनच दलित हा शब्द जन्मापासून दलित शोषित या अर्थाने येतो. वेगवेगळ्या विचारवंतांनी/ साहित्यिकांनी मांडलेल्या संज्ञा संदर्भात व्याख्यांचा थोडक्यात अभ्यास करू.

#### बाबुराव बागूल :-

"माणसाच्या मुक्तीचा पुरस्कार करणारे, माणसाला महान मानणारे, वंश, वर्ण आणि जातिश्रेष्ठत्वाला कठोर विरोध करणारे जे साहित्य ते दलित साहित्य."

#### डॉ. म. ना. वानखेडे :-

यांच्या मते, "दलित साहित्य म्हणजे दलित लेखकांनी दलितांविषयी निर्माण केलेले प्रक्षोभक विद्रोही साहित्य."

#### प्रा. यशवंत मनोहर :-

"दलित साहित्य हे वर्ण बळीचे आणि वर्गबळीचे साहित्य. बाबासाहेबांच्या वाणीचा हा वाङ्मयीन वणवा आहे. संस्कृतीने ज्यांची पोटे आणि मनेही उपाशी ठेवली त्या उपेक्षितांच्या

हृदयाचे, मेंदूचे हे जिवंत ललिताकार आहेत. या साहित्याच्या पोटी एका मानवकेंद्री सुसभ्य युगाचा गर्भ वादळी निकराने वाढतो आहे."

दलित साहित्याचे  
स्वरूप आणि वैशिष्ट्ये

**प्रा. केशव मेश्राम :-**

"हजारो वर्ष ज्यांच्यावर अन्याय झाला अशा अस्पृश्यांना दलित म्हटले पाहिजे व त्याच वर्गातील लेखकांनी निर्माण केलेल्या साहित्यास दलित साहित्य म्हणावे."

पुढेही ते म्हणतात, 'ज्या साहित्यविश्वाला पूर्वपिढ्यांच्या व स्वनुभवांच्या झळाची झळाळी आहे. नेस्तनाबूत केलेल्या मानवी अस्मितेची उभारी आहे, विपरीततेच्या गर्तेतून व उपलब्ध साहित्यविश्वाला पोकळ कोलाहलातून स्वतंत्रपणे आकरण्याची आकांक्षा आहे ते दलित साहित्य.

**प्रा. गंगाधर पानतावणे :-**

"दलित साहित्याची चळवळ हा एक मुक्तिसंग्राम आहे. स्वतःला शोधण्याचा तो एक प्रभावी प्रयत्न आहे. मराठी वाङ्मयात माझे असे चित्र कोणीही रेखाटले नाही. हे चित्र रेखाटण्याची धडपड म्हणजे दलित साहित्य. तो कोंडलेल्या मनाचे हुंकार आहे."

**प्रा. शरदचंद्र मुक्तिबोध :-**

दलित असणे व दलित जाणीव असणे हे भिन्न आहे. दलित जाणिवेतून दलित जीवनविषयक जे वाङ्मय निर्माण होते ते दलित साहित्य.

**पू. ल. देशपांडे :-**

"दलित वाङ्मयाने मराठी साहित्यात प्रथम जर काही आणले असेल तर संतापातून चमकणारे अश्रू. अन्यायाविरुद्ध उठताना संतापातून फुटणाऱ्या अश्रूचे मोल हे सर्वात मोठे असते. सामान्याच्या भाषेत हा तळतळाट असतो. ह्याच तळतळाटाचे एक उदात्त स्वरूप म्हणजे दलित साहित्य."

**श्री. दि. के. बेडेकर :-**

"माझा समाज आजवर दलित होता. त्याला आता प्रतिष्ठा मिळाली पाहिजे. ही प्रवृत्ती या साहित्यात दिसते. दलित जीवनाचे वास्तव लढाऊ समाजपरिवर्तनाची व माणुसकीची जिद्द, तिचा उद्गार व आविष्कार म्हणजे दलित साहित्य होय."

**श्री राजा ढाले :-**

"जो जो या समाज रचनेविरुद्ध आणि सांस्कृतिक व्यूह विरुद्ध लढणारा दृष्टिकोण घेऊन साहित्यनिर्मिती करील आणि चुकलेल्या समाजाला वाटेवर आणील तो तो दलित साहित्यिक असेल आणि त्याचे साहित्य हे दलितांच्या दृष्टिकोणातून लिहिलेले असेल."

**प्रा. दत्ता भगत :-**

"आंबेडकरी विचार आत्मसात केल्यामुळे प्राप्त होणाऱ्या जीवनविषय दृष्टिकोणाधारे स्वतःला आणि स्वतः भोवतीच्या वास्तवाला जाणून घेण्याच्या उत्कट इच्छा शक्तीचा शब्दरूप आविष्कार म्हणजे दलित साहित्य."

**गो. पू. देशपांडे :-**

"दलित साहित्य म्हणजे दलितांनी किंवा दलितांसाठी लिहिलेले साहित्य नव्हे, तर दलित संवेदनशीलतेतून जन्मलेले साहित्य होय."

वरील प्रमाणे दलित व्याख्यानवरून असे दिसून येते की, "दलित" या माणसाला केंद्रवर्ती ठेवून व्याख्या मांडल्या आहेत. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारातून आणि प्रेरणेतून जन्माला आलेले दलित साहित्य केवळ दलितांसाठी लिहिलेले नव्हे. क्रांतिविन्मुखता आणि क्रांतिसन्मुखता यांच्या संघर्षातून निर्माण झालेले दलित साहित्य बंधमुक्त माणसाचा विचार करते. तसेच प्रत्येक माणसासाठी समता, स्वातंत्र्य, बंधुता व न्याय आणि प्रज्ञा, शील, करुणा या मानवी मूल्यांचा पुरस्कार करते. इतर साहित्याहून दलित साहित्य निराळे उरते. या साहित्यातील आत्मशोध आंबेडकरी विचार आत्मसात केलेल्या लेखकांचा आहे. आंबेडकरी विचार आत्मसात केल्यामुळे धर्म, रूढी, परंपरा, वर्णव्यवस्था इत्यादीमुळे मानवाचे शोषण केले जाते.

**१.२.२. दलित जाणीव विशेष :-**

'दलित साहित्य म्हणजे फक्त दलितांनी लिहिलेले साहित्य नव्हे. तर माणसाच्या मुक्तीचा पुरस्कार करणारे, माणसाला महान मानणारे, वंश, वर्ण आणि जातीच्या श्रेष्ठात्वाला कठोर विरोध करणारे ते दलित साहित्य.' या बाबुराव बागुलांच्या विचारातून दलित साहित्य म्हणजे काय याचे उत्तर मिळते. जन्माने दलित असणे आणि मनात दलित असणे या वेगवेगळ्या गोष्टी आहेत. दलित जाणिवेचा विचार हा सामाजिक बांधिलकीशी जुळवला जातो. विषम पातळीवरून दलित जाणिवेचा व्यक्त करणाऱ्या दलित साहित्याने भारतीय जीवन पद्धतीचे डोळस भान ठेवावे लागते. दलित साहित्याची शोषणाविरुद्ध सामाजिक व आर्थिक बांधिलकी लक्षात घेतली पाहिजे. सामाजिक, राजकीय, सांस्कृतिक व आर्थिक शोषणाविरुद्धची ही जाणीव आहे. हीच जाणीव दलित साहित्यातून प्रकट होत असते. 'दलित जाणीव किंवा संवेदनशीलता मुळात स्वायत्त, स्वयंसापेक्ष नाही. दलितेतर समाजाची सापेक्षता तिच्यात गृहीत धरलेली आहे. हा दलितेतर समाज किंवा संदर्भ खूप बदलत चालला आहे व त्याच्या सोबत दलित समाज ही बदलत आहे. एक मात्र खरे की, दोहोतील हे अपरिहार्य बदल सर्वथा अपेक्षेप्रमाणे होत नाही. त्यामुळे खैरलांजी हत्याकांडासारख्या अमानुष घटना आजही घडताना दिसतात. पण बदलाच्या प्रवाहाची दिशा दलित-दलितेतर अंतराय कमी करण्याकडे आहे, गुणवत्ताधिष्ठीत समानता निर्माण करण्याकडे आहे, असे दिसते. हे नव्या दिशेचे निदर्शक आहे. एकूणच मराठी जाणिवेत, मराठी संवेदनशीलता, मानसिकतेत हा आशाकिरण पाहण्याची व जपण्याची ऊर्मी निर्माण व्हावयास हवी.' असे प्रा. रा. ग. जाधव यांना वाटते.

\* दलित जाणिवेसंदर्भात दलित विचारवंतांनी आपले वेगवेगळे मते मांडलेले आपणास दिसून येतात.

**डॉ. भालचंद्र फडके :-**

"दलित जाणीव म्हणजे महाराष्ट्राच्या विशिष्ट सांस्कृतिक परिस्थितीतून निर्माण झालेली व्यक्ति-समष्टीसंबंधीची निरोगी संकल्पनेसंबंधीची जाणीव होय."

**बाबुराव बागूल :-**

"दलित जाणीव म्हणजे लोकशाहीची जाणीव होय. समता, स्वातंत्र्य, बंधुता व माणसाच्या मोठेपणाची होय."

**वामन निंबाळकर :-**

"जातीयतेमुळे किंवा कोणत्याही अन्य कारणामुळे झालेले शोषण या विषयी निर्माण झालेली चीड आणि या चिडीतून संघर्ष करावा अशी निर्माण झालेली जाणीव म्हणजे दलित जाणीव होय."

**डॉ. वासुदेव मुलाटे :-**

"दलित जाणीव म्हणजे दलित जीवनाच्या परिवर्तनाचा विचार आहे. आशावादी दृष्टिकोण, दलित जीवनाची दुःखे तरलतेने टिपण्याची प्रवृत्ती तसेच सामाजिक बांधिलकीशी असणारे अतूट नाते म्हणजे दलित जाणीव."

**दया पवार :-**

"मध्यमवर्गीय समाजाने स्वीकारलेल्या जाणिवेला छेद देणारी, तळागाळतील माणसाबद्दल आपुलकी बाळगणारी, कप्पेबंद व्यवस्थेला नकार देणारी जी क्रांतिकारी जाणीव तीच दलित जाणीव."

**वसंत पळशीकर :-**

अस्पृश्य असणाऱ्याच्या पोटी आपला जन्म झाला आहे आणि अशा मलिनपणात आपला जन्म झालेला आहे आणि मलिनपणात आपल्याला जन्म काढायचा आहे याची सदोदित जाणीव असणे म्हणजे दलित जाणीव असणे."

वरील प्रमाणे दलित जाणिवे संदर्भात दलित विचारवंतांनी आपले वेगवेगळे मते मांडलेले आपणास दिसून येतात. दलित जाणीव दलित प्रश्नाकडे मानवाधिकारच्या दृष्टीने पहाते. सुधारणावादी विचाराने प्रेरित झालेली जाणीव असून ती क्रांतिकारी भूमिका घेतांना दिसते. दलित जाणीव जाती व्यवस्थेच्या विरोधात बोलत असते. चातुर्व्यवस्थेखाली दाबलेल्या गेलेल्या वेदनेचा हुंकार म्हणजे दलित जाणीव होय. या जाणिवेत सामाजिक बांधिलकी आहे तसेच शोषणाविरुद्ध नकार ही आहे. दलित जाणीव विशिष्ट सामाजिक दृष्टिकोण आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी दिलेल्या सामाजिक समतेचा विचाराचा आविस्कार दलित जाणिवेच्या माध्यमातून प्रकट होतांना दिसते. दलित लेखक हा सामाजिक बांधिलकी

मानणारा लेखक आहे. जे जे जगलं, भोगलं, अनुभवले, ते ते तसचं साहित्यात मांडले. लेखक अशोक व्हटकर लिहितता " मला समजू लागल्यापासून मी ज्या पद्धतीच्या समाजात राहलो, वाढलो, शिकलो आणि आता वावरत आहे, त्या समाजाचे यथाशक्ती प्रामाणिकपणे मी चित्रण केले आहे. हयासारखे दलित लेखक सामाजिक जाणिवेने ओतप्रोत भरलेले दिसतात. तर बाबुराव बागूल म्हणातात "अपृथ्यता लवकर घालायची असेल तर खेडी सोडा, नाही तर धर्मव्यवस्थेवर आधारलेली अर्थव्यवस्था मोडा. वरील विचारातून असे दिसून येते की, दलित लेखकाची मानसिकता ही इतर लेखकांच्या मानसिकतेहून वेगळी आहे. दलित लेखकाचा अनुभव हा जातीविशिष्ट अनुभव आहे. दलित लेखकाच्या लेखनात जात हा एक महत्वाचा घटक आहे. जन्माने दलित असलेला माणूस व्यवस्थेला आव्हान देतो, हे रुचणारे सत्य आहे. आंबेडकरी विचार आणि दलित लेखकाचा भोगवटा ह्या रसायनातून दलित जाणीव जन्मली आली.

### १.२.३. दलित साहित्याच्या विविध भूमिका

दलित साहित्य संकल्पनेच्या संदर्भातील वेगवेगळ्या साहित्यिकांच्या भूमिका पुढील प्रमाणे सांगता येतील.

#### नामदेव ढसाळ :-

"दलित म्हणजे अनुसूचित जातीजमाती, बौद्ध, कष्टकरी जनता, कामगार, भूमिहीन शेतमजूर, गरीब शेतकरी, भटक्या जमाती, आदिवासी इत्यादी होय.

#### डॉ. प्रभाकर मांडे :-

"दलित म्हणजे अशा व्यक्तींचा समूह, ज्यांचा माणूस म्हणून जगण्याचा हक्क हिरवला गेला आहे. ज्यांच्या जन्माने ज्यांच्या वाटयाला या समाजरचनेत एकाच प्रकारचे जीवन आले आहे, माणूस म्हणून ज्यांचे मूल्य अव्हेरले गेले आहे, ज्यांना माणसासारखे मनाने जगणे नाकारले गेले आहे ते दलित होय."

#### डॉ. म. वा. वानखेडे :-

"दलित म्हणजे केवळ बौद्ध अथवा मागासवर्गच नव्हे, तर जे पिळले गेलेले असे श्रमजीवी आहेत ते सर्व 'दलित' म्हणून सांगतात."

#### प्रा. जनार्दन वाघमारे :-

"भारतीय दलितला अनेक शतकांपासून संस्कृतीच्या, धार्मिक व सामाजिक जीवनाच्या बांधणीत व विकासात बरोबरीचा हिस्सा मिळू शकत नाही. या देशाचा वारसदार असूनही त्याला वारसा प्राप्त झाला नाही. तो या देशाचा, पण हा देश त्याचा कधीच होऊ शकला नाही, असा तो दलित."

#### प्रा. केशव मेश्राम :-

"दलित शब्दच स्फोटक आहे. महान संस्कृतीचे गोडवे गाणारी समाजव्यवस्था, तिने स्वीकारलेली धर्म व ईश्वर ही भयस्थाने, त्यांना सहाय्यभूत होणारी चतुर्वर्ण्यव्यवस्था,

तीच्यातून निर्माण झालेले जन्माधारित वंशश्रेष्ठत्व अशा या काटेरी साखळीत फार मोठा समाज तिरस्कृत ठरला गेला त्यामुळे उद्धोष मानवतेचा असला तरी कृत्य अमानवीपणाचे, चर्चा बंधुत्वाची पण वागणूक शत्रुत्वाची अशी आहे. मूल्य समानतेचेपण पद्धती विषमतेची, अशा दाहक अनुभावातून पिळवटल्या गेलेल्या माणसाच्या अनंत दुःख-अपेक्षांना, प्रतिकारच्या हुंकारला, मूल्य व अस्मितेच्या शोधला, दलित शब्द प्रेरक ठरला आहे."

वरील विचारवंतांच्या दलित साहित्याच्या विविध भूमिकेच्या चर्चेवरून असे स्पष्ट होते की, भारतीय जातीवर्गीय परंपरेतील समाजस्थितीशी निगडीत लावलेला आहे. या विविध विचारवंतांच्या भूमिका दलित साहित्याच्या मूळ प्रयोजनावर आणि प्रेरणेवर मुख्यतः प्रकाश टाकतात.

#### १.२.४ दलित साहित्याची पूर्वपरंपरा :-

दलित साहित्य हे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या पूर्वी ही उदयास आलेले होते. डॉ. आंबेडकर पूर्व काळापासून दलितांच्या चळवळींना सुरुवात झालेली होती. सत्याग्रह, भाषणे, उठाव, आंदोलने या स्वरूपाचे होते. तसेच ते वाङ्मयीन स्वरूपाचेही होते. यांच्याही साहित्यकृतीच्या मुळाशी 'विद्रोह' हाच होता.

थोडक्यात आपण दलित साहित्याच्या पूर्वपरंपरा अभ्यासू.

##### \*संत चोखामेळा :-

दलित साहित्याच्या पूर्वपरंपराचा अभ्यास करतांना संत चोखामेळा यांच्या साहित्यनिर्मिती पासून करावा लागेल. संत चोखामेळा जन्माने अस्पृश्य असून वारकरी संप्रदायातील संत कवि होत. त्यांच्या अभंगातून ईश्वर भक्तीबरोबरच समाजातील विषमतेची जाणीव ही ते व्यक्त करतांना दिसतात. संत चोखामेळा आपल्या अभंगातून रुढी-परंपरेविरुद्ध, अन्यायाविरुद्ध आवाज उठवतात.त्यांच्या अभंगातून

" मज दूर दूर हो म्हणती"

अशी ईश्वराजवळ ते तक्रार करतात. या तक्रारीतून सामाजिक विषमतेचे दुःख प्रकट होते. आणि या दुःखाचा जेव्हा कडेलोट होतो तेव्हा

"पापांचा घडा भरेल त्यांचा,  
नरक यातना सहतील ते ।  
ते माणूस नाही दैत्याची अवलाद ।  
त्यांचे त्यांना भोगू दे ॥

अशी चीड, संताप ते व्यक्त करतात. ही एक प्रकारची विद्रोहचीच भावना आहे.

आपले दुःख, वेदना ते देवभक्तीमध्ये बुडविण्याचा प्रयत्न करतात.

"कोण तो सोवळा कोण तो ओवळा ।  
कोणाशी विटाळ कशाचा जाहला ॥"

असा विद्रोहाचा आवाज त्यांच्या अभंगातून अधूनमधून उठत असला तरी,

'अहोजी, तुमचे दारीचा मी कुतरा' असे लाचार शब्द ही येतात. तरीही चोखोबांनी सामाजिक विषमतेविरुद्ध आवाज उठवला. दलित वर्गाच्या वेदनेला, दुःखला शब्दरूप देणारे दलित साहित्याचे पहिले उद्गाते ठरतात.

### शिवराम जानबा कांबळे :-

शिवराम कांबळ्यांचे वडील जानबा कांबळे हे पुण्यातील भांबुर्डे गावाचे वतनदार महार होते. त्यांनी दलितोद्धाराचे काम येथूनच केले. हिंदू समाजाची पुर्नबांधणी करायची असेल तर उच्चवर्णीयांनी पढाकार घेतला पाहिजे, असे स्पष्ट मत त्यांनी व्यक्त केले होते. बाबा पद्मनजी आणि ज्योतिबा फुले यांच्या विचारांची प्रेरणा घेऊन शिवराम कांबळे यांनी आपल्या लेखातून स्पष्टपणे विचार मांडले. मराठा दिनबंधू (कोल्हापूर) यामध्ये प्रकाशित केलेल्या पहिल्या पत्रात आपली मते त्यांनी परखडपणे आणि निर्भयपणे मांडली. तसेच त्यांनी आपल्या न्याय-हक्कांच्या मागण्यासाठी पार्लमेंटला अर्ज सादर केला होता. तत्कालीन सरकारने संधी दिली तर महार जमात मागे राहू शकत नाही, असे त्यांनी ब्रिटिश सरकारला आवाहन केले.

शिवराम जानबा कांबळे यांनी १९०३ मध्ये पुणे जिल्ह्यातील सासवड येथे ५१ गावांच्या महारांची सभा बोलावली होती. आपल्या हक्कांसाठी अस्पृश्यांनी केलेला हा पहिला संघटित आणि सनदशीर प्रयत्न होता. १९०८ मध्ये त्यांनी 'सोमवंशीय मित्र' नावाची मासिक पत्रिका सुरू केली. १९१० मध्ये शिवराम जानबा कांबळे यांनी जेजूरी येथे महारांची भव्य परिषद भरवली आणि महारांनी आपल्या मुलींना 'मुरळी' म्हणून देवाला वाहू नये, असे आवाहन केले. त्यांनी आपल्या लेखणीतून अस्पृश्यांमधील अंधश्रद्धेवर जसे प्रहार केलेले आहेत तसे सवर्ण आणि ब्रिटीशांकडून होणाऱ्या अन्यायाविरुद्ध दाद ही मागितलेली दिसते.

### गोपाळ बाबा वलंगकर :-

गोपाळ बाबा वलंगकर हे ब्रिटिशांच्या लष्करातून १८८६ मध्ये निवृत्त झाले. त्यांनी आपल्या सेवानिवृत्तीनंतर अस्पृश्य समाजाची सेवा करण्यासाठी 'अनार्य दोष परिहार' नावाची संघटना स्थापन केली. सन १८८८ मध्ये त्यांनी 'विटाळ विध्वंसन' नावाची पुस्तिका लिहून अस्पृश्यतेवर विदारक प्रकाश टाकला. गोपाळ बाबा वलंगकर यांना जेव्हा अस्पृश्यांना जेव्हा ब्रिटिश लष्करात बंदी केली आहे हे कळले तेव्हा त्यांनी महात्मा फुले, बाबा पदमनजी यांची भेट घेऊन चर्चा केली. आणि १८९४ मध्ये ब्रिटिश सरकारकडे निवेदन सादर केले. त्यांनी आपल्या निवेदनात म्हटले होते, "अस्पृश्यांची लष्करात भरती केली पाहिजे. अस्पृश्यांनी वेळोवेळी ब्रिटिशांच्या बाजूने लढून आपले शौर्य सिद्ध केले आहे. तेव्हा ब्रिटिश सरकारने अस्पृश्यांच्या लष्कर भरतीस बंदी करू नये." यांनी अस्पृश्यांच्या सुधारणाविषयक कार्याला वाहून घेतले होते. अस्पृश्यांमधील पोटजातीतील तणाव संपवणे, त्यांच्या मध्ये रोटी-बेटीचा व्यवहार सुरू करणे, त्यांना मृत मांस खाण्यापासून परावृत्त करणे, त्यांच्या संघटनेची जाणीव निर्माण करणे. असे कार्य केले आहेत.

गोपाळ बाबा वलंगकर दलितांमधील वृत्तपत्राचे पहिले वार्ताहार म्हणून ही ओळखले जातात. त्यांनी विटाळ विध्वंसन या पुस्तकातून अस्पृश्यतेचे जोरदार खंडन केले आहे. म्हणूनच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी गोपाळ बाबा वलंगकरांची सामाजिक कार्याची स्तुती केली आहे.

किसन फागुजी यांनी दलित व्यथेला, वेदनेला आपल्या कवितेतून व प्रहसनातून प्रत्ययकारी शब्दरूप दिले. अस्पृश्यांसाठी शाळा, वाचनलये आणि वसतिगृहे सुरू केली. सन १८९० सुमारास आपले समाज कार्यसुरू केल्याचे दिसते. सन १९०७ मध्ये त्यांनी अस्पृश्य मुलींच्या शिक्षणासाठी 'चोखामेळा कन्याशाळा' स्थापन केली. महार मजुरांचे प्रश्न सोडवण्यासाठी किसन फागू बंदसोडे यांनी प्रयत्न केले. त्यांनी सन १८८८ ते १९२२ ह्या काळात 'मजदूर पत्रिका' नावाने पत्र चालवले. १९१९ मध्ये 'अंत्यज समाज' नावाची संस्था स्थापन केली. किसन फागुजी बंदसोडे यांनी कविता, तमाशा, नाटक अशा साहित्य प्रकार लिहून अस्पृश्यांच्या प्रश्नाविषयी जागरूकता निर्माण केली आणि अस्पृश्यांच्यावतीने संघर्ष केला. तत्कालीन समाज व्यवस्थेचे वास्तव रूप त्यांनी काव्यातून प्रकट केले 'पशुहुनि केले हीन । नच उर दिला कुठे मान ॥ असे सांगतांच 'साहू नका कुणाचा जुलूम । होऊ नका कुणाचे गुलाम । सोडून या रे सारे बदकाम असा स्वाभिमानी संदेशही ते देतात. यातून बाहेर पडण्यासाठी ' महाराशी अंती । नही लढ्याविण मुक्ती ॥ असा लढा , संघर्षाचा मार्ग ते सांगतात.

या सर्वांनीच आपआपल्या स्वभाव धर्मानुसार साहित्यातून विद्रोह व्यक्त केले आहे. त्यांचे साहित्य दलित जाणीवेतून उदयास आलेले आहे. समाज जागृतेचे आव्हान व प्रबोधन आणि समाज परिवर्तन हे त्यांच्या साहित्याचे महत्वाचे विशेष आहेत. या काळातील वैचारिक लेखन हे अभंग, कवणे, गीते, काव्य, शाहीरी या वाङ्मयच्या मुळाशी होते. समाज जागृती व प्रचार हाच हेतु दिसतो.

---

### १.३ दलित साहित्य स्वरूप आणि वैशिष्टे

---

दलित साहित्य हे आधुनिक साहित्य आहे. स्वातंत्र्योत्तर काळातल्या दलित चळवळीच्या झंझावातामुळे हे साहित्य जसे प्रभावित झाले आहे. तसे आंबेडकरी विचारांच्या प्रेरणेमुळे ह्या साहित्याचा उदय झाला आहे. दलित चळवळीचा मुख्य उद्देश माणसाला 'माणूस' म्हणून जगवले पाहिजे. दलितांचे शोषणापासून मुक्ति करण्यासाठी सान्या शोषितांचा हुंकार हा नकार, प्रक्षोभ, बंड आणि विद्रोहाच्या माध्यमातून दलित साहित्यातून व्यक्त होतो.

#### १.३.१ आत्मशोध :-

दलित समाजाला डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि त्याच्या विविध चळवळीने आत्मसन्मानाने जीवन जगण्याची दिशा दिली. दलित साहित्य हे चळवळीचे साहित्य आहे. या चळवळीचा मुख्य उद्देश माणसाला 'माणूस' म्हणून वागणूक दिली गेली पाहिजे हा होता. वर्षानुवर्ष माणसाला माणूस पण नाकारले गेले. विषम समाज व्यवस्थेमुळे दलितांना अतिशय हीन, पशू सम वागणूक दिली गेली. जीवन जगण्यासाठी आवश्यक असणारे सर्व मार्ग सवर्णांनी बंद केले होते. अशा दलितांना आत्मसन्मानाने जगण्याची दिशा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी दिली. शिक्षणाचे महत्त्व दलितांना पटवून दिले. शिक्षणाच्या संस्काराने त्यांच्या विचारांना मार्ग दाखविला. म्हणूनच आत्मसन्मानाची जान आणि भान दलित साहित्यातून प्रकर्षाने व्यक्त होते. कारण दलित मुक्तिच्या लढ्यातील मुख्य उद्देश माणसाचा आत्म सन्मान म्हणजेच माणसाला 'माणूस' म्हणून प्रतिष्ठा देणे हाच आहे.

### १.३.२ नकार :-

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या मते दलित वर्गामध्ये आत्मभान निर्माण झाले पाहिजे आणि आत्म सन्मानाच्या मार्गात ज्या ज्या गोष्टी अडसर ठरतात त्या सर्वांना नकार दिला पाहिजे हा भाव आहे. धर्माधिष्ठित रूढी- परंपरेला दलित वर्गाने नकार दिला. अस्पृश्यता हा दलितांच्या देहावरील कलंक आहे तो वेळ पडली तर दलित वर्गाने आपल्या रक्ताने आपणच पुसून काढला पाहिजे. या बाबासाहेबांच्या विचाराने त्यांच्या आत्मभान निर्माण झाला. शोषण, अंधश्रद्धा, गुलामगिरी, अन्याय, विषमता इत्यादींना नकार देण्याची भूमिका दलित साहित्य घेते. समाजातील आर्थिक, सामाजिक, राजकीय, विषमतेला नकार दिला पाहिजे. समाजात खोलवर रुजलेली अन्यायकारक व्यवस्था नाकारणे, हे कोणत्याही विद्रोही चळवळीचे सूत्र असते. म्हणून अन्यायाला नकार दिला पाहिजे असे दलित साहित्य मानते.

### १.३.३ विद्रोह :-

भारतीय चातुर्वर्ण्यधिष्ठित समाजव्यवस्थेविरुद्ध दलित साहित्याने विद्रोही भूमिका स्वीकारली आहे. या साहित्यात प्रकट होणारे नकार व विद्रोह हे आत्म शोधाचीच प्रकट रूपे आहेत. दलित साहित्यातून व्यक्त होणारा विद्रोह हा मुख्यातः धर्म, रूढी, परंपरा, संस्कृती इत्यादींना पवित्र व श्रेष्ठ मानून त्या आधारे दलितांना वर्षानुवर्ष गुलाम ठेवू पाहणाऱ्या व्यवस्थेविरुद्ध हा विरोध येतो. हा विद्रोह या व्यवस्थेवर आघात करतो. दलित साहित्यातील विद्रोह विशिष्ट व्यक्तिविरुद्ध किंवा विशिष्ट जमातीविरुद्ध नाही तर तो विषमतेविरुद्ध आहे. हा विद्रोह प्रस्थापित व्यवस्थेचा प्रतिशोध नसून एका समान पातळीवरील व्यवस्थेची नितांत गरज प्रतिपादण्याच्या हेतूने आलेला आहे.

### १.३.४ समूहमन :-

दलित साहित्यामध्ये समूहमनाचे दर्शन होते. कोणतीही कलाकृती ही एका व्यक्तीची निर्मिती असते. त्या साहित्यकृतीतून व्यक्त होणारा अनुभव हा एका व्यक्तीचा नसून त्या समाजातील सर्वांचा अनुभव असतो. दलित साहित्यात मात्र निर्मितीच्या पातळीवर एका व्यक्तीची असणारी अनुभूति एकाच वेळी व्यक्तिनिष्ठ ही असते व समूहनिष्ठ किंवा समाजनिष्ठ असते. कारण दलित समाजात अन्याय, शोषण, विषमता, दारिद्र्य याने पीडला गेला आहे. धर्म, रूढी, परंपरा माथी टाकलेले बहिष्कृत जगने हा सर्व समाजाचा अनुभवाचा भाग आहे. म्हणून दलित साहित्यातून येणारे साहित्यिक जेव्हा आपले अनुभव व्यक्त करतो तेव्हा तो अनुभव त्या साहित्यिकाप्रमाणेच त्याच्या समुहाचेही अनुभव असतात. दलित आत्मकथनाचा विचार केला तर तो 'मी' चा अनुभव 'आम्ही' चाही बनतो.

### १.३.५ बांधिलकी :-

दलित साहित्यिक हा सामाजिक बांधिलकी मानणारा लेखक आहे. तो आपल्या समाजाचा पक्षकार होऊन लेखन करत असतो. त्याची बांधिलकी जबाबदारीच्या भावनेतून निर्माण झालेली असते. बांधिलकी या शब्दाचा अर्थ कोणत्या तरी एका भूमिकेशी बांधील राहणे असा घेतला जातो. दलित लेखकाची जन्म नाळ ह्या वर्गाच्या वेदनेशी जखडलेली आहे. दलित साहित्यातील बांधिलकी त्या साहित्यातून व्यक्त होणाऱ्या जीवनमूल्यांच्या संदर्भात आहे. धर्माधिष्ठित सामाजिक विषमता, या विषमतेतून वाट्याला आलेले पशुपेक्षाही हीन, भयावह

जीवन, डॉ. बाबासाहेबांच्या रूपाने दिसलेला प्रकाशाचा मार्ग यांच्या प्रेरणेतून दिसतो. दलित साहित्याचा उद्देश मानवी जीवनात स्वातंत्र्य, समता, बंधुता, व न्याय याचा हा आहे. याकरिता पारंपरिक व्यवस्था उद्ध्वस्त केली पाहिजे. तरच माणसात सौहार्द जपले जाईल. म्हणूनच दलित साहित्यात दलित समाजाच्या दुःखभोगाचे आणि वेदनेचे चित्रण येते. आणि याचवेळी सर्व माणसामध्ये मैत्रीपूर्ण नात्याची अपेक्षा व्यक्त करते.

### १.३.६ विज्ञाननिष्ठा :-

दलित साहित्य ईश्वरकल्पनेला नकार देते. आंबेडकरवाद हा मानवी मूल्यावर आधारलेला तो भक्कम अशा बुद्धिवादावर उभा आहे. आणि बुद्धतत्त्वज्ञानाची त्याची मूल बैठक असल्याने विज्ञान हे त्यांचे एक अंग आहे. भगवान बुद्ध प्रमाणे आंबेडकरवादामेही ईश्वर, आत्मा यांना नाकारले. देवधर्माला, धर्मशास्त्राला त्याच्या सिद्धान्तयास नाकारले आहे. प्रा.रावसाहेब कसबे म्हणतात,

"प्रज्ञा, शील, करुणा व मैत्रीची सांगड म्हणजे आंबेडकरवाद

अनित्य, अनात्म, अनिश्चरवाद आणि

विज्ञानवाद म्हणजे आंबेडकरवाद

बुद्धीप्रमाण्य, विवेक, गती, तर्क आणि

बुद्धिवादाचा स्वीकार म्हणजे आंबेडकरवाद"

यामुळे आंबेडकरी प्रेरणेतून दलित साहित्याचा विज्ञाननिष्ठा हा एक गुणधर्म आहे.

---

### १.४ दलित साहित्य प्रेरणाशक्ती

---

दलित साहित्य हा वाङ्मयप्रवाह केवळ मराठीच नाही तर भारतीय स्तरावर स्थापित झाला आहे. जग जवळ येण्याची प्रक्रिया वाढीला लागल्याने दलित साहित्य हा साहित्यप्रवाह विश्वस्तारावर आज चर्चिला जात आहे. दलित साहित्याची निर्मिती ही सामाजिक संघर्षातून झालेली आहे. समाजात अस्पृश्यांना माणूस म्हणून नाकारले गेले होते, त्यांना पशू समान वागणूक मिळत होती. त्यातूनच सामाजिक संघर्ष वाढू लागला. इतिहास काळात ज्या ज्यावेळी असा संघर्ष झाला त्या त्यावेळी मानवता आणि समानता यांचे महत्व सांगण्यासाठी त्या त्या धर्मात धर्मक्रांती आणि समाजक्रांती करण्यासाठी महापुरुष जन्माला आले. तथागत भगवान बुद्ध, संत कबीर, भगवान महावीर, येशू ख्रिस्त, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, चार्वाक, गुरु नानक, संत रामानुज, रामस्वामी पेरियार, संत बसवेश्वर, महात्मा ज्योतिरव फुले, कार्ल मार्क्स, शाहू महाराज यांचा निर्देश करता येईल. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे मूळ दलित साहित्याचे प्रेरणा स्थान आहेत. यांच्या महान विचारांमुळेच समाजातील विषमतेवर विद्रोह करण्यात आला. यांच्या विचाराची प्रेरणा घेऊन दलित लेखक लिहू लागला. अस्पृश्यांनी समाजातील विषम व्यवस्थेविरुद्ध प्रतिकार केला. म्हणून आपणास दलित साहित्यप्रवाहच्या मुळाशी असणाऱ्या प्रेरणा शक्तीचा परिचय करून घेणे महत्वाचे ठरेल.

खालील प्रमाणे आपण दलित साहित्य प्रेरणेचा अभ्यास करू.

### १.४.१ तथागत भगवान बुद्ध :-

जातिभेद, कर्मकांड, देवधर्म, मूर्तिपूजा, प्रेषित या गोष्ठी नाकारून भगवान गौतम बुद्ध दलित साहित्याची प्रेरणा ठरतात. गौतम बुद्ध यांनी आपल्या कार्याच्या केंद्रस्थानी मानवाचे हित मानले. गौतम बुद्धाचे तत्वज्ञान समता, स्वातंत्र्य, न्याय आणि नीतीमत्ता या सामाजिक मूल्यांवर उभी आहे. दलित साहित्यानेही याच मूल्यांना मानले. बुद्धांना नव्या स्वतंत्र मानवाचा विकास करण्यासाठी मानवतावाद विकसित करायचा होता. तसेच मानवतावादी धर्माचे केंद्र प्रज्ञा, शील, करुणा या तत्वांना मानले. गौतम बुद्धानी शोषणाधिष्ठित जातीभेदाचा, अस्पृश्यतेचा किंबहुना सर्व पातळ्यांवरील सामाजिक विषमतेचा धिक्कार केला. विश्वांती, स्वतंत्र, अहिंसा, नीतीमत्ता या महान मूल्यांना अनुसरून मानव कल्याण साधणारे मानवतेचे व क्रांती परिवर्तनाचे पहिले प्रवर्तक भगवान गौतम बुद्ध दलित साहित्याची मूळ प्रेरणा मानली जाते. रा. ग. जाधव म्हणतात की, "दलित समाजाचे साहित्य-विषय होऊ शकणारे महान नाट्य बौद्धदर्शनाच्या कलोचित आंगवणाच्या प्रक्रियेत दडलेले आहे." भगवान बुद्ध हे दलित साहित्याची आदिम प्रेरणा आहे हे निर्विवादपणे मान्य करावे लागेल. मानवाला जगण्यासाठी आवश्यक असणारे नीतिबळ बौद्धधर्माच्या प्रेरणेतून मिळते. म्हणूनच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांना धर्मातरासाठी बौद्धधर्म सर्वात योग्य धर्म वाटला. बुद्ध प्रेरणेतून दलितांना सामाजिक-सांस्कृतिक तेजस्विता लाभली. मानव हेच मध्यवर्ती मूल्य मानले. माणसाने माणसासारखे वागले पाहिजे हा विश्वव्यापी महान संदेश देणारे भगवान बुद्ध हे दलित साहित्याच्या प्रेरणा स्थानी असलेले आपणास दिसून येतात. म्हणून दलित चळवळीचा पहिला प्रणेता महाकारुणिक तथागत गौतम बुद्ध हेच आहेत.

### १.४ २ महात्मा ज्योतिराव फुले :-

दलित साहित्य भगवान बुद्ध यांच्या नंतर महात्मा ज्योतिराव फुले यांना प्रेरणास्थानी मानले. महात्मा ज्योतिराव फुले यांचा कालखंड अव्वल इंग्रजी राजवटीचा होता. एकोणीसाव्या शतकात आधुनिक शिक्षण हे वैयक्तिक व सामूहिक उन्नतीचे एकमेव साधन होते. ते मानवतावादाचे आणि समतेचे निस्सीम पुरस्कर्ते होते. अन्याय, अंधश्रद्धा, रूढी परंपरा या विरुद्ध समाज जागृती केली. अस्पृश्यांची उन्नती साधायची तर प्रथम त्यांच्या शिक्षणाकडे वळले पाहिजे हे महात्मा फुलेंनी हेरले. जातिभेद, धर्मभेद, व चतुर्वर्ण्य या पिढीजात संस्थांवर महात्मा फुलेंनी कडाडून हल्ला चढविला. महात्मा फुले हे खरे सत्य शोधक होते. मानव व मानवी समाजाचे हित साधले पाहिजे, या गोष्टीची त्यांनी मनाशी पक्की खूणगाठ बांधली. अस्पृश्यांना शिक्षणाशिवाय दुसरा उपाय नाही हे महात्मा फुलेंसारख्या समाजसुधारकांनी जाणले. महात्मा फुलेंचा लढा हा स्वातंत्र्य, समता, समान न्याय, बंधुता, यावर आधारित होता. त्यांनी ख्रिस्ती धर्मापासून प्रेरणा घेऊन पुण्यात महारमांगासाठी पहिली शाळा काढली. विचार आणि कृती यांची योग्य सांगड महात्मा फुलेंनी आपल्या जीवनात घातली होती. आधुनिक युगात मानवाच्या उद्धारासाठी बंडखोरीची पाऊले महात्मा फुले यांनी उचलली. म्हणून आपल्या घरचा पाण्याचा हौद अस्पृश्यांसाठी खुला केला. जातीव्यवस्था ही ईश्वर निर्मित नाही, ती उच्चवर्गाच्या स्वार्थीबुद्धीने तिला जन्माला घातले आहे, असे महात्मा फुले यांचे स्पष्ट मत होते. उच्च वर्गाच्या सांस्कृतिक मत्केदारीवर जोरदार त्यांनी हल्ला चढवला. अस्पृश्यांना त्यांच्या हक्काची जाणीव करून दिली. त्यांना दलित पीडित समाजाचे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजकीय, अशा सर्व स्तरावर

स्वतंत्र्य अपेक्षित होते. म्हणून त्यांनी अस्पृश्यतेविरोधात, शोषण, जातिभेद, वर्गभेद या विरुद्ध त्यांच्या महान विचाराने आणि प्रत्यक्ष कृतीने हल्ले केले. विद्येचे महत्त्व त्यांनी खालील विचारातून पटवून दिले आहे.

'विद्येविणा मती गेली'  
'मतीविणा नीती गेली'  
'नीतीविणा गती गेली'  
'गतीविणा वित्त गेले'  
'वित्तविणा शूद्र खचले'

'इतके अनर्थ एका अविदयेने केले.'

अस्पृश्यांना शिक्षण न मिळाल्यामुळे मानवी जीवनाचे अनर्थ होते. हे त्यांनी ओळखले आणि शिक्षणाचे महत्त्व पटवून दिले. त्यांनी अनेक ग्रंथ लिहिले. 'शेतकऱ्यांचा आसूड, ब्राह्मणाचे कसब, गुलामगिरी, छत्रपती शिवाजीराजे भोसले यांचा पोवाडा, अखंडादि काव्यरचना, सार्वजनिक सत्यधर्म, इ.आहेत. या ग्रंथापैकी सार्वजनिक सत्यधर्म, गुलामगिरी या ग्रंथातून अन्याय, अंधश्रद्धा, रूढी परंपरा, जातिभेद, धर्मभेद, व चतुर्वर्ण्य यावर आवाज उठवला. तसेच यातूनच स्पष्ट होते की महात्मा फुले यांच्या विचारांना दूरदृष्टी व बुद्धिप्रामाण्यावादाचे अधिष्ठान लाभले होते. जुन्या धर्मरूढीपरंपरेविरुद्ध त्यांनी आवाज उठवला. महात्मा ज्योतिराव फुले यांचे कार्य व्यवस्थेला हादरे देणारे होते. फुले दांभ्याने त्रास आणि छळ सहन करून समाज सेवा केली. समाजातील अंधश्रद्धा, बुबाबाजी, दैन्य आणि दास्य हयाविरुद्ध त्यांनी आयुष्यभर संघर्ष केला. समस्त 'माणूस' हा फुल्यांचा कार्याचा आणि विचारांचा केंद्रबिंदू होता. म्हणून दलित चळवळीत त्यांचे कार्य मोलाचे आहे. आपल्या सर्व ग्रंथात हिंदूधर्मग्रंथ, ब्राम्हणप्रधान हिंदू समाजरचना यांवर घणाघाती आघात केले म्हणूनच दलित साहित्यात महात्मा ज्योतिराव फुले यांच्या विचारांना व साहित्याला आपली प्रथम प्रेरणा स्थान मानते.

### १.४.३ संत कबीर :-

संत कबीर हे समाज सुधारक संत कवी होते. संत कबीर यांना डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी गुरु मानले होते. संत कबीर सत्य, विज्ञान आणि कर्म सिद्धांत यावर लिहीत. इतक्या शतकानंतरही आज ही त्यांचे दोहे अतिशय समर्पक वाटतात. धार्मिक थोतांडवर कडक आसूड त्यांनी ओढले. त्यांनी तत्कालीन प्रचलित असणाऱ्या धर्मातील अंधश्रद्धा व अनिष्ट प्रथा यावर दोहयेच्या माध्यमातून प्रखर टीका केली. संत कबीर कोणत्याही धर्माला मानात नसे, सर्व धर्मातील चांगल्या विचारांना ते मानात व ते आत्मसात करीत असे. कबीरांचे उपदेश कोणत्याही काळाकरता प्रेरणादायी असे आहेत. या उपदेशातून त्यांनी समस्त मानव जातीला योग्य मार्गावर चालण्याची प्रेरणा दिली आहे. समाजातील रूढी-परंपरा, कुप्रथा, यावर आपल्या दोहयामधून कडाडून विरोध केला आहे. आणि आदर्श व सुसंस्कृत समाज निर्मितीस खंबीर भूमिका मांडली. संत कबीर तत्कालीन व्यवस्थेचे समाजसुधारक म्हणून हिन्दी साहित्यात ओळखले जातात. संत कबीर यांचे बहुतांश दोहे यावर विज्ञानवादी बुद्धधर्माचा प्रभाव दिसतो. त्यांचे विज्ञानवादी दोहे आजही जगास प्रेरित करतात. संत कबीर आपल्या निंदकाला स्वतःचा हितचिंतक मानायचे. कबीरानी परमेश्वर पेक्षा वरचे

स्थान गुरुला मानायचे. संत कबीर सत्य बोलणारे निर्भीड आणि निर्भय मनाचे व्यक्तिमत्व होते. आपल्या उपदेशाने ते समाजात बदल घडवू इच्छित होते. समस्त मानवास समानतेने वागणुकीची प्रेरणा देत होते. कर्मकांडचे प्रखर विरोधक होते. भगवान बुद्धाप्रमाणे मानवाच्या महानतेवर त्यांची श्रद्धा होती. जातीव्यवस्थेमध्ये पडलेले भेद त्यांना अमान्य होते. हिंदू धर्मातील मूर्तिपूजा, वाईट चालीरीती याविरुद्ध विद्रोह पुकारला. म्हणून दलित साहित्य कबीर यांच्या विचारांना व साहित्याला आपली प्रथम प्रेरणा स्थान मानते.

#### १.४.४ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर :-

तथागत भगवान बुद्ध, संत कबीर, महात्मा ज्योतीराव फुले या महान विचारवंतांना डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपले गुरु मानले. यांच्या तात्विक पार्श्वभूमीतूनच दलित साहित्य उदयास आले हे सर्वमान्य आहे. मात्र काल-परिस्थितीचा विचार करता दलित जीवनाची युगसापेक्ष मूल कल्पना दलित साहित्य डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनाच मानते. म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या कार्याचा अभ्यास करू.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी प्रस्थापित समाजव्यवस्थेत पिळल्या गेलेल्या, भरडल्या गेलेल्या दलित वर्गाचे उन्नयन करायचे तर या वर्गामध्ये जागृती निर्माण झाली पाहिजे. याकरिता शिक्षणाला प्रवृत्त केले पाहिजे. त्यांना संघटित केले पाहिजे आणि संघर्षासाठी, स्वहक्कासाठी त्यांना तयार केले पाहिजे. म्हणून बाबासाहेबांनी दलितांना हक्क आणि अधिकाराची जाणीव करून दिली. चारित्र्याची महती त्यांना सांगितली. त्यांना स्वाभिमान शिकवला. अस्पृश्यांच्या हक्कांची कैफियत मांडली. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या चळवळीने अस्पृश्याच्यामुक्तीचा लढा उभारला. दलित वर्गाला गुलामीची जाणीव करून दिली. त्यांच्यात आत्मभान निर्माण केले. गावकूसापासून ते गोलमेज परिषदांपर्यंत त्यांनी अस्पृश्यांचे प्रश्न मांडले. विविध सभा, संमेलने, परिषदा, सत्याग्रह, मेळाव्यातून दलितांच्या अस्तित्वाचे आणि अस्मितेचे लढे अधिक त्यांनी तीव्र केले. पत्रकारिता, पक्ष, संघटना, व समाज या माध्यमातून त्यांनी प्रस्थापित व्यवस्थेविरुद्ध मोठा संघर्ष उभा केला. यातूनच सामाजिक समतेचा विचार दृढ झाला. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी आपल्या कार्यामध्ये जन्मजात जातीव्यवस्था नाकारून सामाजिक समता प्रस्थापित व्हावी या गोष्टीला अतिशय महत्व दिले त्याच प्रमाणे स्त्री-पुरुष समानता यावी या विचारलाही प्राधान्य दिले. म्हणूनच भारतीय राज्य घटनेमध्ये त्यांनी दलित वर्ग, आदिवासी वर्गाबरोबर समस्त महिला वर्गाचेही या देशातील दुय्यम नागरिकत्व नष्ट केले आहे. तसेच समान संधी, मतदानाचा अधिकार दिला. समस्त स्त्री वर्गास सामाजिक, राजकीय, आर्थिक न्याय हक्क मिळवून देण्यास भारतीय राज्य घटना व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे कार्य विशेष उल्लेखनीय आहेत. त्यांनी सुरू केलेल्या अनेक सत्याग्रहातून समता, स्वातंत्र्य, बंधुता, न्याय यांची मागणी केली. बाबासाहेब आंबेडकरांनी हिंदू धर्मातल्या जातीव्यवस्थेविरुद्ध आमरण लढा दिला. हिंदू धर्माला धारेवरच धरले होते. सुरुवातीला बाबासाहेबांची भूमिका हिंदू धर्म सुधारणेची होती. 'आम्हीही हिंदू आहोत. आम्हालाही इतर हिंदू प्रमाणे समानतेने वागवलं पाहिजे.' या भूमिकेतून हिंदू धर्म सुधारणेचा प्रयत्न केला. बाबासाहेबांनी केलेल्या दलित उध्दाराच्या चळवळीत स्वातंत्र्य, मूलभूत हक्क, व्यक्तिविकास या गोष्टींना महत्व दिले. माणुसकीच्या सर्व हक्कांवर उच्चवर्णीया इतकाच दलित वर्गाचाही अधिकार आहे आणि त्या हक्कासाठी झगडणे हे दलित वर्गाचे न्याय व पवित्र कर्तव्य आहे. यांची जाणीव प्रथम डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी दलित वर्गामध्ये निर्माण केली. त्यामुळे दलित समाजाला व समाजातील

लेखकाला अस्मिता मिळाली ती बाबासाहेबांच्या महान तत्वज्ञानामुळे आणि प्रगल्भ विचारशक्तीमुळे. यातूनच प्रेरणा आणि स्फूर्ति घेऊन दलित विचारवंत व साहित्यिक यांनी आपली भूमिका समाजापुढे मांडली. दलितांच्या आत्मशोधाच्या मुळाशी बाबासाहेबांच्या विचारांचीच प्रेरणा आहे. आणि यातूनच दलित साहित्याचा जन्म झाला, दलित साहित्यिक लिहू लागले. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी अस्पृश्यांना राजकीय व सामाजिक हक्क मिळवून देण्यासाठी ज्या भूमिका घेतल्या त्या भूमिकांचे पडसाद शाहीरांच्या कवनातून उमटले. या काळात अनेक शाहिरांनी आपल्या कवणातून बाबासाहेबांचे कार्य व विचार सांगितले. बाबासाहेबांनी आपल्या भाषणातून पुढील विचार मांडलेले आपणास दिसून येतात. "आज समाजजीवन व राष्ट्र जीवन प्रगत होणारे साहित्यशास्त्र निर्माण होत नाही. आपल्या स्वातंत्र देशाला एकात्मतेची व बंधुत्वाची नितांत गरज आहे. एकात्मता आणि बंधुता हा आपल्या राष्ट्राचा गाभा ठरला पाहिजे. त्याशिवाय प्रबळ शक्ती निर्माण होणार नाही. म्हणून साहित्यकलेतून मानवतावादी शास्त्र निर्माण होणे आवश्यक आहे. त्यासाठी साहित्य क्षेत्रात राष्ट्रोपयोगी क्रांतीची लाट उसळली पाहिजे. अलिकडे तर साहित्याच्या कडा काळवंटत चाललेल्या आढळतात. पीक फार आहे पण ते निःसत्व आहे, आज आम्हाला ज्ञानसत्त्वाची भूक आहे. तेव्हा तत्परतेने सावध होऊन जीवन व संस्कृतीविषयक मूल्य साहित्यिकांनी जोपासली पाहिजेत. ती सतेज बनवली पाहिजेत. म्हणून मला साहित्यिकांना सांगायचं आहे की, आपलं उदात्त जीवनमूल्य, सांस्कृतिक मूल्य आपल्या साहित्य प्रकारातून आविष्कृत करा. आपलं लक्ष्य आंकुचित मर्यादित ठेवू नका. ते विशाल बनवा. आपली वाणी चार भिंतीपुरती राखू नका. खेड्यातील उपेक्षित, दुःखी समाजाचं जीवन साहित्याद्वारे उन्नत करण्यासाठी झटा. त्यातच खरी मनवाता आहे." दलित साहित्याने हीच प्रेरणा घेऊन पुढे वाटचाल केली आहे. शिक्षणा सारखे कोणतेही हत्यार नाही, याची त्यांना कल्पना होती. म्हणून शिक्षणाचे महत्त्व आणि आग्रह धरला. 'शिका, संघटित व्हा, संघर्ष करा' हा विचार दलित वर्गास दिला. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारांनी आणि कार्याने जागृत झालेल्या दलित लोककवींनी त्यांचे विचार सर्वदूर पोहचवले. त्यासाठी त्यांनी लोककलेचा आधार घेतला. कवणे, जलसा, तमाशे हे माध्यम वापरले. अस्पृश्य समाजातील ही वाङ्मयनिर्मिती हा दलित साहित्याचा प्रारंभ मानता येईल. वाङ्मयाचा हेतु प्रामुख्याने डॉ. बाबासाहेबांचे विचार अस्पृश्य समाजापर्यंत पोहचवणे हा होता. मेलेल्या ढोरांचे मांस खाऊ नका, मेलेले गुरेढोरे ओढू नका असा संदेश पोहचवत होते. थोडक्यात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे संपूर्ण तत्वज्ञान हीच दलित साहित्याची प्रेरणा आहे.

भगवान बुद्ध, महात्मा फुले, संत कबीर, मार्क्स, हे दलित साहित्याची प्रेरक शक्ति असली तरी खऱ्या अर्थाने डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हेच खरे दलित साहित्याचे प्रेरणा स्थान आहे.

**आपली प्रगती तपसा :-**

**प्रश्न १. दलित संकल्पना स्पष्ट करून दलित साहित्याच्या प्रेरणा सांगा.**

---

---

---

---

### १.५ समारोप

दलित साहित्य भगवान बुद्ध, महात्मा फुले, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांना प्रेरणास्थानी मानते. डॉ. बाबासाहेब यांच्या पूर्व काळातील गोपालबाबा वलंगकर, शिवबा जनबा कांबळे, किसन फागोजी बंदसोडे, गणेश आकाजी गवाई इत्यादींच्या कार्य व लेखनातून दलित साहित्याची पूर्वपीठिका तयार झालेली आहे. बाबासाहेब यांनी सुरु केलेल्या दलित चळवळीपासून प्रेरणा घेऊन पदे, पोवाडे, वग, हे साहित्य निर्माण झाले. दलित लेखकांनी प्रस्थापित व्यवस्थेला नकार दिला आणि क्रांतिकारक विद्रोहाचा मार्ग स्वीकारला. दलित लेखकांनी साहित्यनिर्मितीकडे समाज परिवर्तनाचे प्रभावी साधन म्हणून पहिले. दलित साहित्याने सामाजिक आणि सांस्कृतिक विषमतेविरुद्ध आवाज उठवला. प्रस्थापित व्यवस्थेला नकार दिला. मानवतेच्या अधिष्ठानावर उभ्या असलेल्या समाजव्यवस्थेची मागणी केली, यासाठी त्यांनी 'शब्द' आपले हत्यार बनवले आणि ते साहित्यातून व्यक्त होऊ लागले. वाङ्मयाकडे समाज प्रबोधनाचे माध्यम म्हणून त्याचा वापर करू लागले. आपल्या जीवनाच्या व्यथा त्यांनी साहित्यात मांडले. साहित्यकृतीचा आशय, रूपबंध व मूल्य या पातळ्यावर दलित साहित्याने बंडखोरीची भूमिका स्वीकारली. सर्व साहित्य प्रवाहांच्या मुळाशी शोषण हा समान घटक आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर रूढी परंपरेच्या भयावह, अन्यायकारक यांच्या जोखडातून दलित वर्गाला यातून बाहेर पडण्याचा लढाऊ मार्ग दाखविला. पिढ्यांनुपिढ्यांचे अत्याचार, दारिद्र्य, भूक, अन्याय, इत्यादीचा भोगवटा आला. यामुळेच मनुष्याचे हक्क हिरावून घेणाऱ्या प्रस्थापित धर्माधिष्ठित समाजरचनेशी संघर्ष हे दलित साहित्याचे ध्येय आहे. म्हणून दलित साहित्याने मनुष्यत्व हेच श्रेष्ठ मूल्य मानले. म्हणून दलित साहित्य वास्तववादी साहित्य असून ते जीवनमूल्यांचा पुरस्कार करणारे साहित्य आहे.

### १.६ संदर्भग्रंथ

१. डॉ. लिंबाळे शरणकुमार - दलित साहित्य आणि सौंदर्य ( समीक्षा )
२. प्रा. जाधव रा. ग. - साहित्य: बदलते परिप्रेक्ष्य
३. श्री. खंडेराव हरीश - आंबेडकरवादी साहित्य: दृष्टिकोण आणि दायित्व
४. एम. ए भाग २, मराठी अभ्यास पत्रिका क्रं ८- दलित साहित्य ( भाग १ ) संकल्पना आणि स्वरूप - दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ.
५. [http://lib.unipune.ac.in:८०८०/jspui/bitstream/१२३४५६७८९/७५११/८/०८\\_chapter%२०३.pdf](http://lib.unipune.ac.in:८०८०/jspui/bitstream/१२३४५६७८९/७५११/८/०८_chapter%२०३.pdf)
६. फडके भालचंद्र - दलित साहित्य वेदना आणि विद्रोह.
७. जाधव रा. ग. - निळी क्षितिजे.

## १.७ पूरक वाचन

१. बागूल बाबुराव - दलित साहित्य आजचे क्रांतीविज्ञान, बुद्धिष्ठ पब्लिशिंग हाऊस, नागपूर.
२. भगत दत्ता - दलित साहित्य दिशा आणि दिशांतर.
३. खरात शंकरराव - दलित वाङ्मय प्रेरणा व प्रवृत्ती.
४. कसबे रावसाहेब - आंबेडकर आणि मार्क्स, सुगावा प्रकाशन, पुणे प्र. आ. १९८५ .
५. पानतावणे गंगाधर - दलित वैचारिक वाङ्मय, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई प्र. आ. मे, १९९५.

## १.८ नमूना प्रश्नसंच

### अ) दिर्घोत्तरी प्रश्न

१. दलित साहित्य स्वरूप आणि दलित साहित्याचे वैशिष्ट सांगा.
२. दलित साहित्य म्हणजे काय? दलित साहित्याच्या विविध संकल्पना स्पष्ट करा.
३. दलित साहित्याच्या विविध भूमिका स्पष्ट करा?
४. दलित साहित्य स्वरूप आणि दलित साहित्याच्या प्रेरणा लिहा.
५. दलित साहित्याची पूर्वपरंपरा स्पष्ट करा?

### ब) टिपा लिहा.

१. दलित साहित्य संकल्पना
२. दलित जाणीव
३. दलित साहित्याच्या विविध व्याख्या
४. दलित साहित्यातील विद्रोह
५. दलित साहित्यातील समूहमन

### क) एका वाक्यात उत्तरे लिहा.

१. दलित साहित्य साधारणतः कोणत्या वर्षी उदयास आलेला साहित्य प्रवाह आहे?
२. "माणसाच्या मुक्तीचा पुरस्कार करणारे, माणसाला महान मानणारे, वंश, वर्ण आणि जातिश्रेष्ठत्वाला कठोर विरोध करणारे जे साहित्य ते दलित साहित्य." ही दलित साहित्याची व्याख्या कोणत्या विचारवंताची आहे?
३. दलित साहित्याला कोणत्या महान विचारवंताची प्रेरणा मिळाली आहे?
४. जन्मापासून शोषित या अर्थाने कोणता शब्द वापरला जातो?
५. कोणाच्या मते, "दलित साहित्य म्हणजे दलित लेखकांनी दलितांविषयी निर्माण केलेले प्रक्षोभक विद्रोही साहित्य." होय?



## दलित साहित्याच्या चळवळीची पार्श्वभूमी

### घटक रचना

- २.० उद्देश
- २.१ प्रस्तावना
- २.२ सामाजिक, राजकीय, सांस्कृतिक, धार्मिक परिस्थिती : वास्तव
- २.३ आंबेडकरपूर्व, आंबेडकरी व आंबेडकरोत्तर चळवळी
- २.४ दलित साहित्य चळवळीचा सामाजिक, सांस्कृतिक, राजकीय चळवळीशी असलेला अनुबंध
- २.५ दलित साहित्याची पूर्वपरंपरा
- २.६ समारोप
- २.७ संदर्भ ग्रंथ सूची
- २.८ पुरक वाचन
- २.९ स्वाध्याय

---

### २.० उद्देश :

---

- दलित चळवळ आणि साहित्य यातील अनुबंध लक्षात घेणे.
- दलित साहित्य चळवळीच्या निर्मितीमागील पार्श्वभूमी समजून घेणे.
- डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या प्रेरणेचा मूलभूत विचार करणे.
- दलित साहित्याची पूर्वपरंपरा लक्षात घेणे.
- दलित साहित्याच्या चळवळीचे क्रांतिविज्ञान लक्षात घेणे.

---

### २.१ प्रस्तावना

---

'दलित साहित्य' हा मराठी भाषा आणि साहित्यातील एक क्रांतीदर्शी वाङ्मयीन प्रवाह आहे. आज त्याचा परीघ केवळ मराठीच नव्हे, तर भारतीय भाषांमध्ये विस्तारला आहे. किंबहुना जागतिक स्तरावरील साहित्यव्यवहारात त्याची स्वतंत्र ओळख निर्माण झालेली आहे. सामान्यतः १९६० नंतर दलित साहित्य प्रवाहाची निर्मिती झाली असली तरी या निर्मितीला हजारो वर्षांची परंपरा आहे. भारतीय समाज, संस्कृतीचे मोठे अवकाश त्याला कारक ठरलेले आहे. यामध्ये सामाजिक, धार्मिक, राजकीय चळवळीची पार्श्वभूमी महत्त्वाची आहे. विशेषतः विसाव्या शतकात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या रूपाने मिळालेली उर्जस्वी प्रेरणा, त्यांचे क्रांतिकारी विचार, कार्य आणि तत्त्वज्ञान याचा ऐतिहासिक स्वरूपाचा वारसा त्यात महत्त्वाचा आहे. या सर्व चळवळीच्या तात्विक बैठकीतून दलित साहित्य उदयास आले. विद्रोह, विज्ञान आणि विश्वासात्मकता या त्रिमूल्यांची बैठक घेऊन त्याचा

विकास झाला. मराठीच्या वाङ्मयीन परिप्रेक्ष्यात दलित साहित्याने क्रांतीविज्ञान घडविले. हे सूर्यसत्य कोणीही नाकारू शकणार नाही. दलित साहित्याच्या या सर्व जडणघडणीच्या मागे प्रदीर्घ पार्श्वभूमी असून ती सर्वप्रथम समजून घेणे अगत्याचे आहे. म्हणून प्रस्तुत घटक चर्चेत आपण दलित साहित्याच्या चळवळीची पार्श्वभूमी विस्ताराने लक्षात घेणार आहोत.

## २.२ सामाजिक, राजकीय, सांस्कृतिक, धार्मिक परिस्थिती : वास्तव

दलित साहित्य हा एक सामाजिक आविष्कार आहे. हजारो वर्षे दडपलेल्या शोषित, वंचित दलित समुहांनी आपल्या जगण्याला या लेखनातून मुखर केले. त्यामुळे दलित साहित्याची निर्मिती ही सामाजिक वास्तवातून झालेली आहे. तिला भारतातील प्राचीन काळापासून चालत आलेली धार्मिक, राजकीय, सांस्कृतिक परिस्थिती कारणीभूत आहे. या विधानाचे संदर्भ आपल्याला सर्वप्रथम विचारात घ्यावे लागतील. मानवी समाजव्यवस्थेचा इतिहास सांगतो की, माणूस भटकंती करत जगत होता. पुढे तो गुहांमध्ये स्थिरावला. तो समुहाने राहू लागला. वर्ग अस्तित्वात आले. यातूनच एक समाजरचना निर्माण झाली. भारतीय परिप्रेक्ष्यात समाजव्यवस्थेची रचना ही वर्गापेक्षा वर्णाधिष्ठित आहे. इथे धर्माचे प्राबल्य असून त्याआधारेच सामाजिक जीवन चालू असते. या समाजव्यवस्थेतील विविध आंतर्विरोधातूनच दलित समाजवास्तव उभे राहिले. याचा विचार पुढीलप्रमाणे लक्षात घेता येईल.

### वर्णव्यवस्था :

भारतीय समाजरचना ही वर्णाधिष्ठित आहे. त्यामध्ये ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्रिय आणि शूद्र यांचा समावेश केला जातो. वास्तविक ही सर्व रचना हिंदू धर्मव्यवस्थेतील वेदांवर आधारित आहे. ऋग्वेदाच्या पुरुषसुक्तात विराट पुरुषांच्या कल्पनेतून त्याची रचना करण्यात आलेली आहे. या रचनेला कोणताही वैज्ञानिक आधार नाही. तरीसुद्धा या विचाराचे प्राबल्य हिंदू समाजामध्ये मोठ्या प्रमाणात आहे. ब्राह्मण या वर्णाला पारंपरिक रचनेतून श्रेष्ठ दर्जा दिला गेला. कारण ही वर्णव्यवस्था त्यांनीच बनवलेली आहे. याविषयी अभ्यासकांनी नोंदविलेली मते महत्त्वाची आहेत. त्यांच्या मते, आर्य हे भारतात परदेशातून आले. गंगा नदीच्या खोऱ्यात असलेल्या एतदेशीय लोकांवर त्यांनी आक्रमण करून त्यांना पराभूत केले. आपले वर्चस्व प्रस्थापित केले. त्यांनीच पुढे वैदिक संस्कृती निर्माण केली. वर्णव्यवस्थेची मांडणी केली. ब्राह्मण हे आर्य लोकांचेच वारस आहेत. असे अभ्यासकांनी म्हटलेले आहे. प्राचीन समाजरचना ही फक्त द्वैवर्णीय होती. त्यामध्ये ब्राह्मण आणि वैश्य यांचा समावेश होता. ब्राह्मणांप्रमाणेच वैश्यांनी आपली वेगळी संरचना तयार केली. शूद्र हा तिसरा वर्ण पुढे निर्माण केला गेला. शूद्रातूनच अतिशूद्र हा चौथा वर्ण उदयास आला.

दलित साहित्य या वर्णाश्रम व्यवस्थेला नकार देते. कारण या उतरंडीमुळे दलितांचे शोषण झाले. त्याला सामाजिक गुलामगिरीला सामोरे जावे लागले. दलित साहित्याचा हा विरोध बुद्धिनिष्ठ जडवादी तत्त्वज्ञानाच्या पूर्वपरंपरेतून आलेला आहे. भारतातील चैतन्यवादी आणि जडवादी विचारलढ्याविषयी डॉ. योगेंद्र मेश्राम यांनी मार्मिक भाष्य केले आहे. भारतातील सामाजिक, धार्मिक वास्तवाविषयी ते लिहितात, ब्राह्मणी वर्णाश्रम धर्म आणि धर्मप्रणीत चातुर्वर्ण्य व्यवस्था ही अव्यवहार्य नाही, तर ती पूर्वीही निरुपयोगी होती, असे इतर

बुद्धिनिष्ठ जडवादी दर्शनेही सांगतात. तेव्हा आजच्या काळात पुन्हा तीच व्यवस्था चालविणे अत्यंत गैरवाजवी व समाजविघातक गोष्ट आहे. चार वर्ण हे ब्रह्मसूत्र धर्मशास्त्रकारांनी केवळ सामाजिक निर्बंधाच्या सोईस्कर निर्मितीसाठी कल्पिलेले आहेत. त्यांची रचना पुरोहिती वर्चस्व कसे राखता येईल. या एकाच उद्देशाने प्रेरित झालेली आहेत. टॅलिनने म्हटले आहे, की व्यवहाराशिवाय तत्त्वज्ञान वांझ आहे. आणि तत्त्वज्ञानाशिवाय व्यवहार आंधळा आहे. सामाजिक व्यवहार सुकर होण्यासाठी तशाच सौकर्यदायी तत्त्वज्ञानाची प्रेरणा हवी असते. पण काही वर्गाच्या वर्चस्वासाठी बहुजन समाजावर चातुर्वर्ण्याचे सोयिस्कर निर्बंध लादण्यास सांगणारे तत्त्वज्ञान व्यवहारोपयोगी तर नाहीच, पण साफ आंधळे आहे, असेच म्हणावे लागेल. चातुर्वर्ण्य वेदप्रणीत आहे आणि म्हणून ते मान्य केले पाहिजे येथवर ठिक, पण प्राणीमात्राचा आत्मा एकच आहे, तर मग प्रत्यक्ष जीवनात एवढी भयानक आणि क्रूर विषमता का ? चातुर्वर्ण्य मान्य आहे पण त्याला असह्य आणि अमानुष भेदभावाची ही कठोर धार कशाला हा रास्त प्रश्न आहे. याचा अर्थ स्पष्ट आहे. हिंदूधर्म रक्षकांना वेदांची आणि ब्रह्मदेवाची गरज होती ती चातुर्वर्ण्याच्या रक्षणासाठी गौतमबुद्धाने हे सारे जाणिले होते. म्हणूनच आपल्या इहवादी तत्त्वदर्शनात ईश्वराला जागाच ठेवली नाही. त्यांनी चातुर्वर्ण्यालाही मुळातून नाकारले. (दलित साहित्य : उद्गम आणि विकास, पृ. १३ ते १४) दलित साहित्यात आलेले वास्तव हे समाजातील ही वर्णव्यवस्था नाकारणारे असून त्याला तात्विक अधिष्ठान आहे. हे वरील सर्व विवेचनातून आपल्या लक्षात येते.

### जातिव्यवस्था :

दलित साहित्य हे भारतीय जातवास्तवाचे आविष्करण करते. ज्याप्रमाणे वर्णव्यवस्था ही धर्मरक्षकांची उपज होती, त्याचप्रमाणे जातीची उत्पत्ती ही इथल्या पारंपरिक धर्माची निर्मिती आहे. जातिसंस्थेच्या उदयासंदर्भात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी आपल्या भारतातील जाती, त्यांची उत्पत्ती आणि विकास या पहिल्याच संशोधनपर ग्रंथात वस्तुनिष्ठ मांडणी केलेली आहे. तसेच वैचारिक लेखनात जातिव्यवस्थेविषयी विविध मान्यवरांनी सुद्धा महत्त्वाची मते मांडलेली आहेत. या सर्व मतांचा विश्लेषणात्मक आढावा डॉ. योगेंद्र मेथ्राम यांनी आपल्या ग्रंथात घेतलेला आहे. ते लिहितात, चातुर्वर्ण्य समाजरचनेप्रमाणेच भारतीय संस्कृतीचे एक प्रमुख वैशिष्ट्य इथली जातिसंस्था व जातिव्यवस्था होय. ही जातिव्यवस्था केव्हा व कशी अस्तित्वात आली. याबाबत विचारवंतात एकमत नाही. कोण म्हणते की जन्मावरून जात पडली, कोणी तिला कर्मावरून आल्याचे म्हटले. कोणी धंदा तर कुणी वंशशुद्धत्वाच्या भावनेतून जन्मास आल्याचे म्हटले आहे. शेवटी जातीचा उगम चातुर्वर्ण्य व्यवस्थेत आहे. याबाबतीत सर्व शास्त्रज्ञ व विचारवंतांमध्ये मतैक्य आहे. (दलित साहित्य : उद्गम आणि विकास, पृ. २९) जातिव्यवस्था ही धार्मिक आधारावर उभी केलेली व्यवस्था असून दलितांच्या शोषणाची ती रीती आहे. याविषयी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी परखड मत नोंदविले आहे. ते लिहितात, जातिसंस्थेने हिंदू समाजाचा तोंडवळाच कुरूप करून टाकला आहे. जातिसंस्था ही चातुर्वर्ण्याने निर्माण केलेली असमानतेची व तिरस्काराची उतरंड आहे. तो हिंदूंच्या सामाजिक जीवनाचा निर्बंध बनली आहे. जातिभेदामुळे सामाजिक जीवनात दरी निर्माण झाली आहे. जातीजातीत मत्सद, व्देष आणि शत्रूत्व निर्माण झाले आहे. जातिसंस्थेने सार्वजनिक हितबुद्धीच नष्ट केली. मने संकुचित केली. समाजाला नीतिभ्रष्ट नि दुबळे करून ठेवले. जात ही एक भावना आहे. ती एक मनाची अवस्था आहे. ती टाकणे म्हणजे भावनात्मक बदल घडून आणणे. पण असा बदल धर्म होऊ

देत नाही. रूढी आड येते. शास्त्र तिला आधार देते. म्हणून धर्मशास्त्रे ही खरी मानवाची शत्रू आहेत. शास्त्रांनी हिंदूंची मानसिक गुलामी मजबूत केली आहे. (दलित साहित्य : उद्गम आणि विकास, पृ. ३१) जातिव्यवस्था ही भारतीय समाजाचे एक वास्तव आहे. दलित साहित्याचा लढा याच जातवास्तवाशी असून दलित लेखकांनी सातत्याने भारतीय समाजातील चातुर्वर्ण्य आणि जातिव्यवस्थेवर प्रहार केलेले आहेत.

### अस्पृश्यता :

दलित साहित्यात आलेले समाजवास्तव वर्ण, जातिव्यवस्थेशी बांधलेले आहे. विशेषतः यातूनच आलेली अस्पृश्यता ही व्यवस्था त्यात प्राधान्याने चित्रित झालेली आहे. अस्पृश्यता हा भारतीय समाजातील कलंक आहे. अमानवी मानसिकतेचे प्रतीक आहे. यातूनच गुलामगिरी आणि सामाजिक शोषण करण्यात आले. याची परखड मांडणी दलित साहित्यात येते. या अस्पृश्यतेविषयी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी मूलगामी संशोधन केले आहे. 'अस्पृश्य मूळचे कोण आणि ते अस्पृश्य कसे बनले?' या ग्रंथात त्यांनी या अस्पृश्यतेचा ऐतिहासिक शोध घेतला आहे. जो महत्त्वाचा आहे. याविषयी डॉ. योगेंद्र मेश्राम लिहितात, अस्पृश्य वर्ग हिंदू समाजातील हया दैनंदिन जीवनामुळे सामाजिकदृष्ट्या समाजात हीन ठरला, आर्थिकदृष्ट्या दरिद्री-गुलाम झाला, आर्थिक व सांस्कृतिकदृष्ट्या प्रगतीची संधीच त्याला कधी लाभली नाही. शिक्षण आणि संस्कृतीची दारे बंद झाली. त्यामुळे त्याच्या जीवनात जिवंतपणाच राहिली नाही. त्याच्यात स्वाभिमान, महत्त्वाकांक्षाच उरली नाही. दलित म्हणून ते कायमचे दुदैवी ठरले. त्यांच्या नशिबी आजन्म अपमानित, पराभूत, अन्याय जीवन जगणे आले. शूद्र कीटकांप्रमाणे गलिच्छपणात जगण्याची व दुःख, दारिद्र्यात पिचत मरण्याची शतकानुशतके त्यांच्यावर सक्ती झाली (दलित साहित्य : उद्गम आणि विकास, पृ. ३५-३६) आणि हे सर्व तथाकथित सामाजिक धारणेच्या व धार्मिकतेच्या नावाखाली घडले, हे विशेष.

अस्पृश्य समाजाला वर्णबाह्यच नव्हे, तर जन्माचे जातिबहिष्कृत व अपवित्र ठरवून त्याला गावाच्या बाहेर राहण्यास आणि निकृष्ट असे जीवन जगण्यास वर्णजातिव्यवस्थेनेच भाग पाडले आहे. भारतातील जातिजमातीचे पृथक्त्व आणि उच्चनीच भाव हाही मुख्यतः भिन्न अशा पवित्र – अपवित्रतेच्या कल्पनावर आधारलेला आहे. एका जातीची किंवा पोटजातीवर पावित्र्यावतीची कल्पना व अन्य जातीच्या वा पोटजातीच्या पावित्र्याची कल्पना भिन्न असते. जी जात किंवा पोटजात स्वतः उच्च समजते. तिच्या दृष्टीने खालच्या समजलेल्या जातीच्या चालीरीतींना ती अपवित्र समजते. अपावित्र्याचे भय हा जातिभेदाचा व उच्चनीचतेचा गाभा आहे. तिचा आधार केवळ अंधश्रद्धा आहे. आर्थिक व्यवसायांमध्ये ही उच्च निच पावित्र्याची कल्पना चातुर्वर्ण्य व्यवस्थेत मुख्य म्हणून गृहीत धरली आहे. त्यामुळे असवर्ण विवाह निंद्य किंवा निषिद्ध मानला आहे. सामाजिक, वर्गीय पिळवणुकीचे तंत्र मोठ्या खुबीने या अपवित्रतेच्या भयाखाली निटपणे ब्राह्मणांनी जपून ठेवली आहे. अपवित्र व्यवसाय टाकून अधिक पवित्र व्यवसाय स्वीकारण्यास बंदी घालून असा व्यवसाय बदलणे दंडनीय ठरविले. त्यामुळे व्यक्तिस्वातंत्र्य व सामाजिक स्वातंत्र्य नष्ट झाले. त्यामुळे व्यक्तिविकासाचा व सामाजिक परिवर्तनाचा मार्ग कायमचा बंद झाला. (दलित साहित्य : उद्गम आणि विकास, पृ. ३६) एकूणच भारतातील समाजव्यवस्थेतील अस्पृश्यतेसाठी रूढी

अमानवी होती. कायद्याने यावर निर्बंध लागलेले असले तरी आजही समाजात अशा बहिष्कृततेच्या घटना घडताना दिसतात.

### आधुनिक युगातील समाजवास्तव :

प्राचीन भारतातील वर्ण, जात, अस्पृश्यता या व्यवस्थांमुळे भारतीय समाजात विषमता, भेदाभेद आणि दुरावा निर्माण झाला. ब्रिटीश काळात या सर्व व्यवस्थांमध्ये परिवर्तन होण्यास मदत झाली. अव्वल इंग्रजी कालखंडात भारतात प्रबोधन युग आले. यातून आधुनिक मूल्यांची मांडणी झाली. या काळात अर्वाचीन महाराष्ट्रातील जातिविषयक चिंतनास आरंभ झालेला दिसतो. या काळात जातीमीमांसेचे तीन संप्रदाय दिसतात. ते म्हणजे ब्राह्मणी, अब्राहमणी आणि मार्क्सवादी भारतीय विचारदर्शनातील पारंपरिक संघर्ष ब्राह्मणीवाद विरुद्ध अब्राहमणीवाद असा होता. म्हणून महाराष्ट्रातील जातिविषयक विचार करताना हा संदर्भ लक्षात घेणे आवश्यक आहे. ब्राह्मणी विचारवंतात जातिव्यवस्थेचे समर्थन करणारा एक वर्ग होता. तर हिंदू धर्माचे अस्तित्व अबाधित राहून त्यात सुधारणा व्हावी. अशी धारणा काही विचारवंतांची होती. भारतात सामाजिक परिवर्तन करण्यासाठी पुरोगामी विचारवंतांचे योगदान अतिशय महत्त्वाचे आहे. त्यांनी सातत्याने ही हजारो वर्षांची वर्णवादी, जातवादी व्यवस्था मोडीत काढण्यासाठी प्रयत्न केले. आणि आधुनिक समाजनिर्मितीसाठी प्रयत्न केले. त्यामध्ये विविध समाजसुधारक येत असले तरी म. फुले, राजर्षी शाहू महाराज आणि डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे कार्य निर्णायक आणि मूलभूत स्वरूपाचे आहे. म. फुले यांनी एकोणिसाव्या शतकातील समाजाला समतावादी विचारांची दिशा दिली. तृतीय रत्नाच्या माध्यमातून हजारो वर्षांपासून बहुजन समाजावर लादलेल्या ब्राह्मणी गुलामगिरीचे सत्यशोधन केले. आणि सत्यशोधक समाजाची बांधणी केली. राजर्षी शाहू महाराजांनी सामाजिक न्यायासाठी आपल्या राजसत्तेचा वापर केला. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी फुले- शाहू महाराजांचा वारसा पुढे घेऊन जात, भारतीय समाजाला स्वातंत्र्य, समता आणि बंधुता या प्रबुद्ध मूल्यांची दिशा दिली. शेवटी भारतीय संविधानाची निर्मिती करून भारत देशातील लोकांना सांविधानिक समाज म्हणून उभे राहण्यासाठी निर्णायक केले. याचा परिपाक म्हणजे भारतातील आजचे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक वास्तव हे संविधानिक मूल्यांवर वाटचाल करत आहे. ही संविधानिकता दलित साहित्याचा गाभा आहे.

### २.३ आंबेडकरपूर्व, आंबेडकरी व आंबेडकरोत्तर चळवळी

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे दलित साहित्याचे आद्य प्रेरणास्त्रोत आहेत. त्यांच्या विचार कार्यातून दलित साहित्याची चळवळ निर्माण झाली. तिला निर्णायक रूप प्राप्त झाले. असे असले तरी दलित साहित्याच्या चळवळीचा पट हा आंबेडकरपूर्व, आंबेडकरी आणि आंबेडकरोत्तर काळातील चळवळीशी बांधलेला आहे. विशेषतः या टप्प्यातूनच दलित चळवळ आणि साहित्याची भूमी तयार झालेली आहे. त्यामुळे या तीन टप्प्यावरील चळवळींचा आढावा घेणे अगत्याचे ठरते.

## आंबेडकरपूर्व चळवळ :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपल्या जीवनात तीन गुरू मानले. तथागत बुद्ध, संत कबीर आणि महात्मा जोतीराव फुले यांचा त्यामध्ये समावेश होते. बाबासाहेबांची ही भूमिका वैचारिक अधिष्ठानातून आलेली होती. त्यामागे निश्चित असे तात्त्विक अधिष्ठान आणि सामाजिक चळवळीचे भान होते. पूर्वी अगदी प्राचीन काळापासून दलित, शोषित, वंचित समुहांच्या उत्थानाचे प्रयत्न झालेले आहेत. त्यामध्ये तथागत बुद्धापासून आपल्याला विचार करावा लागतो. बुद्धाने आपल्या संघात सर्व समुहातील लोकांना प्रवेश दिला. अगदी स्त्री वर्गालाही सामावून घेतले. हजारो वर्षांपासून सामाजिक बहिष्कृत असलेला समूह प्रवाहात आला. त्याला अधिकार मिळाले. त्यामुळे तथागत बुद्ध यांनी केलेले सामाजिक उत्थानाचे कार्य अतिशय महत्त्वाचे आहे. पुढे संत कबीर यांनी आपल्या दोहयातून सामाजिक परिवर्तनाचा विचार मांडला. मात्र एकोणिसाव्या शतकात महात्मा फुले यांनी केलेले यासंदर्भातील कार्य अतिशय महत्त्वाचे होते. दलितांना शिक्षण मिळाले तरच त्यांच्यामध्ये बदल होईल. त्यांची गुलामगिरी नष्ट होईल. अशी फुल्यांची भूमिका होती. यासाठी त्यांनी कृती कार्यक्रम राबविला. दलितांसाठी, स्त्रियांसाठी शाळा काढल्या. सावित्रीबाईंना शिक्षण दिले. त्यांना शिक्षक बनविले. या सर्व पार्श्वभूमीवर दलितांच्या चळवळीला गती आली. आंबेडकरपूर्व काळात गोपाळबाबा वलंगकर, शिवराम जानबा कांबळे, किसन फागू बंदसोड, गणेश आक्काजी गवई इत्यादी समाजचिंतकांनी आपापल्या परीने दलित चळवळीला सामाजिक उत्थानाच्या दिशेने गतिमान केले. या सर्वांचे कार्य अतिशय मोलाचे असून त्यांचा विचार इथे करणे गरजेचे आहे.

## गोपाळबाबा वलंगकर :

दलित चळवळीच्या इतिहासात गोपाळबाबा वलंगकर यांचा नामोल्लेख आद्य दलित समाजसुधारक, कवी, शाहीर व तळमळीचे कार्यकर्ते म्हणून केला जातो. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी मार्च १९२७ मध्ये महाड येथे भरलेल्या कुलाबा जिल्हा बहिष्कृत परिषदेतील भाषणात गोपाळबाबांच्या कार्याचा गौरवाने उल्लेख केला आहे. गोपाळबाबांचे पूर्ण नाव गोपाळबाबा कृष्णा वलंगकर असे होते. त्यांचा जन्म महाडजवळील रावदूल या गावी झाला. रमाबाई आंबेडकर यांच्या माहेराकडून गोपाळबाबा हे डॉ. आंबेडकरांचे नातलग होते. असे चांगदेव खैरमोडे यांनी म्हटलेले आहे. अस्पृश्यतेचे दाहक अनुभव त्यांनी लहानपणीच पाहिले, अनुभवलेले होते. पुढे त्यांना सैन्यात नोकरी मिळाली. फलटणीतच त्यांनी शिक्षण घेतले. १८८६ साली सैन्यातून निवृत्त झाल्यानंतर त्यांनी जात आणि अस्पृश्यता निवारण्यासाठी चळवळ उभारली. त्यांनी १८८८ मध्ये 'विटाळ विध्वंसन' ही पुस्तिका लिहिली. त्यामध्ये अस्पृश्यता ही समाजाला लागलेला कलंक आहे. ही जातकेंद्री अस्पृश्यता धर्माधिष्ठित मांडली जात असली तरी त्यामागे ब्राह्मणीवर्चस्व आहे. अशी परखड व साधार मांडणी या पुस्तिकेत गोपाळबाबांनी केली.

दलित समाजामध्ये प्रारंभीच्या टप्प्यावर जागृती आणि संघटन निर्माण करण्याचे कार्य गोपाळबाबांनी अत्यंत तन्मयतेने केले. विशेषतः ब्रिटिशांनी ज्यावेळी महार, मांग, चांभार जातीतील सैनिकांना अस्पृश्यतेमुळे सैन्यातून बाहेर काढण्याचा निर्णय घेतला. त्यावेळी गोपाळबाबांनी त्याविरुद्ध सनदशीर मार्गांनी लढा उभारला. १८९४ मध्ये त्यांनी एक विनंतीपत्र लिहून याची कैफियत इंग्रज सरकारसमोर मांडली. या पत्राच्या शेवटी त्यांनी १३

कडव्यांची कविता लिहून त्यातून महार समाजाच्या दुःखदस्थितीचे, त्यामागील कारणांचे संदर्भ देवून अस्पृश्यांनी आत्मपरीक्षण करून सन्मानाने जगण्याचा विचार मांडला.

गोपाळबाबा वलंगकर यांनी आपल्या लेखनीतून दलित समाजाला जागृत करण्याचे कार्य केले. त्याच्या सामाजिक जगण्याचे वास्तव आपल्या ग्रंथातून व स्फूटलेखनातून मांडले. विशेषतः दीनबंधू या मासिकातून त्यांचे लेखन प्रकाशित झाले. त्यांचे गद्य आणि पद्य अशा दोन्ही स्वरूपाचे लेखन प्रसिद्ध असून त्याला सामाजिक परिवर्तनाच्या इतिहासात अतिशय मोलाचे स्थान आहे. अशा दलित चळवळ आणि साहित्याला व्यापक दिशा देणाऱ्या गोपाळबाबा वलंगकरांचे निधन १९०० मध्ये रबदूल येथे झाले. (अस्मितादर्श वार्षिक विशेषांक २०१२)

### शिवराम जानबा कांबळे :

आंबेडकरपूर्व कालखंडात दलित समाजामध्ये परिवर्तनाचा विचार पेरणाऱ्या विचारवंतांमध्ये गोपाळबाबा वलंगकरांच्या नंतर शिवराम जानबा कांबळे यांचा नामोल्लेख करावा लागतो. त्यांचा जन्म १८७५ मध्ये पुणे येथे झाला. वास्तविक त्यांचे वडील मूळचे भांबुर्डे गावचे वतनदान महार होते. मात्रनंतर जानबा हे गावकी बंद करून पुणे येथे येऊन नोकरी करून लागले. शिवरामला शिक्षणाची आवड असल्यामुळे त्याला शिकविले. जातीयतेचे चटके त्यांना लहानपणीच भोगावे लागले. शिवराम जानबा कांबळे यांच्यावर म. फुले यांच्या विचारांचा मोठा प्रभाव होता. मराठा, दीनबंधू या वृत्तपत्रांमधून येणारे लेखन ते वाचत होते. यातूनच प्रेरणा घेऊन त्यांनी दलित समाजाच्या उत्थानासाठी कार्य करण्यास सुरुवात केली. १९०३ मध्ये पुरंदर तालुक्यातील सासवड येथे एकावन्न गावच्या महार समाजातील प्रतिनिधींची सभा भरविली. दलितांचे प्रश्न शासनदरबारी मांडण्यासाठी अर्ज करण्याचे निश्चित झाले. त्यांनी स्वतः इंग्रजीत अर्ज तयार करून त्यावर १५८८ इतक्या जातीबांधवांच्या सहाय्या घेतल्या. सरकारला निवेदन दिले. परंतु त्याचा फारसा प्रभाव पडला नाही. तरीसुद्धा रा. कांबळे यांनी नाउमेद न होता आपले सामाजिक कार्य चालू ठेवले.

शिवराम जानबा कांबळे यांनी अस्पृश्योन्नतीचे ध्येय समोर ठेवून सोमवंशीय हितचिंतक मित्र या समाजाची स्थापना केली. आपली भूमिका व समाजाची ध्येयधोरणे लोकांपर्यंत पोहोविण्यासाठी सोमवंशीय मित्र या नावाने मासिक काढले. यामधून विधि सामाजिक प्रश्नांवर अतिशय परखड अशी मते त्यांनी मांडली. विशेषतः अस्पृश्यांमधील देवदासीसारख्या प्रथा नष्ट व्हाव्यात. समाजात सुधारणा घडावी. त्यांच्या आचारविचारात परिवर्तन व्हावे यासाठी कांबळे यांनी प्रामाणिकपणे कार्य केले. महर्षी विठ्ठल रामजी शिंदे यांच्या डिप्रेस्ड क्लासेस कमिटीमध्ये काही काळ त्यांनी काम केले.

शिवराम जानबा कांबळे यांचे विचार व कार्य अस्पृश्यांमध्ये आत्मस्थितीची जाणीव करून देणारे होते. त्यामध्ये धर्मग्रंथांची चिकित्सा होती. अस्पृश्यांचा अवनीतीला हीच धार्मिक व्यवस्था कारणीभूत असल्याचे त्यांनी सातत्याने सांगितले. या देशातील जातीभेद आणि विषमता ही आर्यांच्या आगमनापासून अस्तित्वात आल्याचे त्यांनी प्रतिपादित केलेले आहे. त्यांचे बहुतांश लेखन हे आर्य-अनार्य यांच्यातील संघर्षाची मांडणी करणारे आहेत. या मांडणीत परखड चिकित्सा, ऐतिहासिक मीमांसा आणि प्रबोधनाचा विचार इत्यादी वैशिष्ट्ये आलेली आहेत. (शिवराम जानबा कांबळे चरित्र ग्रंथ : ह.ना. नवलकर)

## किसन फागुजी बनसोड :

दलित साहित्याच्या चळवळीत किसन फागुजी बनसोड यांचे कार्य अतिशय महत्वाचे आहे. त्यांचा जन्म १८ फेब्रुवारी १८७९ मध्ये नागपूर जवळील मोहपा या गावी झाला. पुढे ते नागपूरला आले. येथील पाचपावली भागात ते राहिले. प्रारंभापासून त्यांनी दलित समाजाच्या उत्थान चळवळीत सहभाग घेतला होता. १९०१ मध्ये त्यांनी स्वतःची प्रिंटिंग प्रेस सुरू केली. मराठा दीनबंधू या नावाचे साप्ताहिक सुरू केले. यामधून दलित समाजातील अन्याय-अत्याचारांवर लेखन करून अस्पृश्यांमध्ये आत्मजागृती निर्माण करण्याचा प्रयत्न त्यांनी केला. पुढे त्यांनी १९०३ मध्ये सन्मार्ग बोधक अस्पृश्य समाज संस्था स्थापन केली. ज्यामधून त्यांनी अस्पृश्यांच्या जीवनाला विधायक रूप देण्याचा उत्तम कार्य केले. १९०७ मध्ये त्यांनी मुलींसाठी चोखामेळा कन्याशाळा स्थापन केली. विद्यार्थ्यांसाठी वसतीगृहे चालवली. मिल कामगारांचे प्रश्न हाताळले. या प्रश्नांना प्रभावीपणे मांडता यावे म्हणून त्यांनी मजदूर पत्रिका सुरू केली. पुढे निराश्रित हिंद नागरिक (१९१०) विटाळ विध्वंसक (१९१३), चोखामेळा (१९१३) इत्यादी पत्रके सुरू करून समाजाला दिशा देण्याचे महत्त्वपूर्ण कार्य केले. १९१९ मध्ये त्यांनी अंत्यज समाज नावाची संस्था स्थापन केली. यातून समाजातील अंतर्गत दुही मिटविण्याचा त्यांनी प्रयत्न केला. १९२० मध्ये नागपूर येथे राजर्षी शाहू महाराज यांच्या अध्यक्षतेखाली भरलेल्या अखिल भारतीय बहिष्कृत परिषदेच्या संयोजन मंडळात अतिशय महत्वाची भूमिका पार पाडली. या परिषदेच्या नंतर त्यांनी अस्पृश्यता निर्मूलनासाठी नऊ कलमी योजना जाहीर केली. ज्यामध्ये अस्पृश्यांतील पोटजाती मोडणे, रोटी बेटी व्यवहार करणे, अस्पृश्यांनी स्वावलंबी होण्यासाठी स्वतंत्र उद्योगधंदे निर्माण करणे, शिक्षणाचा प्रचार व प्रसार करणे, बलोपासना करणे, वाचनालये उभारणे, अन्यायाविरुद्ध संघटित होणे आणि अस्पृश्यांची एक राजकीय संघटना स्थापित करणे इ. कलमांचा समावेश होतो. या सर्व कलमांचा उद्देश दलित समाजाला सामाजिक व आर्थिक दृष्ट्या सक्षम करणे हा होता. हे खूप महत्वाचे आहे.

किसन फागुजी बनसोड यांनी वृत्तपत्रीय क्षेत्रात केलेले कार्य अतुलनीय आहे. विशेषतः त्यांनी लिहिलेल्या कवितांमधून समाजोध्दाराचा उद्धार आविष्कृत झालेला आहे. किसन फागुजी बनसोड हे अल्पशिक्षित असले तरी त्यांनी समाजपरिवर्तनाचा वसा घेऊन केलेले कार्य ऐतिहासिक स्वरूपाचे आहे. अशा महान समाजचिंतकाचे निधन १० ऑक्टोबर १९४६ रोजी नागपूर येथे झाले. (अस्मितादर्श वार्षिक विशेषांक २०१२)

## गणेश आकाजी गवई :

दलित साहित्य चळवळीच्या इतिहासात गणेश आकाजी गवई यांचे कार्य अनन्यसाधारण आहे. त्यांचा कालखंड हा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या समकालीन होता. मात्र बाबासाहेब सामाजिक जीवनामध्ये सक्रीय होण्याच्या अगोदरपासून गणेश आकाजी गवई हे दलितांच्या सामाजिक चळवळीत आपले मूलभूत योगदान देत होते. १९१० मध्ये अमरावती येथे महार सुधारक मंडळ स्थापन करण्यात आली होती. या सामाजिक संस्थेशी गवई यांचे घनिष्ठ संबंध होते. अस्पृश्य समाजामध्ये जागृती घडवून आणण्यासाठी या संस्थेच्या वतीने विशेष प्रयत्न केले जात होते. त्यामध्ये खेड्यापाड्यात सभा भरवणे,

पोटजातीत विवाह घडवून आणणे, मुला- मुलींना शिक्षण देणे, सरकारपुढे गा-हाणी मांडणे इ. कार्याचा समावेश होतो. १९१९ ते १९२३ या काळात मध्य प्रांतात वऱ्हाड कौन्सिलवर गणेश आकाजी गवई यांची सरकारचे सदस्य म्हणून निवड करण्यात आली होती. तेव्हा त्यांनी अस्पृश्यांच्या प्रश्नांची मांडणी सरकार दरबारी अतिशय सक्षमपणे केली. विशेषतः अस्पृश्यता हा हिंदूधर्माला लागलेला कलंक आहे. त्याचे निर्मूलन करण्यासाठी शिक्षण हाच एक पर्याय आहे. त्यासाठी अस्पृश्यांनी आपल्या मुलांना शिक्षण दिले पाहिजे. तसेच आपले पारंपरिक व्यवसाय सोडून द्यायला हवेत. आपल्या हक्कासाठी लढायला हवे. असे विचार त्यांनी मांडले.

१९२० नंतर गणेश आकाजी गवई यांनी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या सामाजिक लढ्यात सहभाग घेतला. नागपूर येथे भरलेल्या अखिल भारतीय बहिष्कृत परिषदेचे नियोजन करण्यामध्ये त्यांचा महत्त्वाचा वाटा होता. तद्पूर्वी ते कोल्हापूरला येऊन राजर्षी शाहू महाराज यांच्याशी भेटले होते. त्यांचा तसा पत्रव्यवहारही झाला होता. बाबासाहेबांच्या सांगण्यावरूनच त्यांनी विदर्भात अस्पृश्यांच्या चळवळीला निर्णायक दिशा देण्यासाठी सर्वाना संघटित करण्याचा प्रयत्न केला.

आंबेडकरपूर्व दलित चळवळीच्या इतिहासातील वरील आलेख अतिशय महत्त्वाचा आहे. गोपाळबाबा वलंगकर, शिवराम जानबा कांबळे, किसन फागुजी बनसोडे, गणेश आकाजी गवई आणि इतर दलित लेखक, कवी, विचारवंतांनी केलेले कार्य दलितांमध्ये सामाजिक जागृती निर्माण करण्यासाठी पुरक ठरले. त्यांनी अस्पृश्यांना शिक्षणाचे महत्त्व पटवून दिले. हिंदू समाजातील अस्पृश्यतेचे विदारक चित्र स्पष्ट केले. सामाजिक गुलामगिरीविरुद्ध समाजाला सजग भान दिले. यातूनच दलितांमध्ये आत्मजाणीव निर्माण झाली. विशेषतः आंबेडकरपूर्व काळात सरकार दरबारी विनंती अर्ज करून ज्या मागण्या केल्या होत्या त्यातून राजकीय जागृतीसुद्धा निर्माण झाली. या सर्व प्रयत्नात प्रांजळपणा होता. हक्काची जाणीव होती. सामंजस्य, नम्रता आणि सामाजिक प्रबोधनाची तळमळ इ. गोष्टी होत्या. परंतु आक्रमकता नव्हती. एकसंघ लढा देण्याची भूमिका आणि नेतृत्व नसल्यामुळे हे सर्व प्रयत्न महत्त्वाचे असले तरी मर्यादित स्वरूपाचे होते. असे असले तरी आंबेडकरपूर्व काळातील वरील कार्याला ऐतिहासिक महत्त्व आहे.

### आंबेडकरी चळवळ :

भारताच्या इतिहासात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे व्यक्तिमत्त्व आणि विचारकार्य क्रांतिकारक आहे. त्यांच्या तत्त्वज्ञानाची मूळ प्रेरणा घेऊनच दलित साहित्याची चळवळ निर्माण झाली. त्यामुळे बाबासाहेबांनी केलेल्या कार्याचा विचार करणे इथे अगत्याचे आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा जन्म १४ एप्रिल १८९१ रोजी झाला. त्यांचे मूळ गाव कोकणातील आंबावडे होते. परंतु बाबासाहेबांचे वडील रामजी आंबेडकर सैन्यात होते. मध्य प्रदेशातील महू येथे ते सैन्यात कार्यरत असताना बाबासाहेबांचा जन्म झाला. त्यांचे मूळ नाव भिमराव असे होते. लहानपणापासून भिमराव वडिलांच्या संस्कारात वाढले. शिक्षण घेतले. पारंपरिक समाजव्यवस्थेतील अस्पृश्यतेचे अनुभव त्यांनाही भोगावे लागले. परंतु न डगमगता भिमरावांनी आपले शिक्षण पूर्ण केले. परदेशी शिक्षण घेऊन उच्चविद्याविभूषीत पदव्या प्राप्त केल्या. शिक्षण हे परिवर्तनाचे साधन आहे. सामाजिक लढ्यासाठी त्याचा वापर

होऊ शकतो. हा विचार केंद्रवर्ती ठेवून बाबासाहेबांनी आपल्या शिक्षणाचा उपयोग समाजपरिवर्तनासाठी केला. सामान्यतः १९२० नंतर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपल्या सामाजिक चळवळीला सुरुवात केली. विविध प्रकारची आंदोलने, सत्याग्रह, निवेदने, ग्रंथलेखन, सामाजिक, राजकीय संघटना स्थापन करून दलितांच्या उत्थानासाठी निर्णायक क्रांतिकारी कार्य केले.

डॉ. आंबेडकरांनी २७ जानेवारी १९१९ मध्ये ब्रिटीशांनी नेमलेल्या साऊथबरो मतदान कमिटीसमोर सर्वप्रथम अस्पृश्यांच्या न्यायहक्कासाठीची निवेदनाच्या माध्यमातून मांडणी केली. त्यामध्ये त्यांनी अस्पृश्यांचे प्रतिनिधी स्वतः अस्पृश्यांनीच निवडलेले असले पाहिजेत. अशी भूमिका मांडली. हा दलितांच्या राजकीय हक्काचा लढा बाबासाहेबांनी सुरू केला होता. त्याला सामाजिक परिवर्तनाचे अधिष्ठान होते. डॉ. आंबेडकरांनी पुढे २० जुलै १९२४ मध्ये सामाजिक जागृतीसाठी 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' नावाची संघटना स्थापन केली. शिका, संघटित व्हा आणि संघर्ष करा हे या संघटनेचे ब्रीदवाक्य होते. बाबासाहेबांनी या संघटनेच्या माध्यमातून अस्पृश्य समाजाच्या शैक्षणिक व आर्थिक विकासासाठी मूलभूत प्रयत्न केले. बहिष्कृत हितकारिणी सभेने आपल्या सुरुवातीच्या तीन वर्षांच्या काळात सामाजिक चळवळीसाठी पुरक असलेले उपक्रम राबविले. अस्पृश्यांच्या मुलांना शिक्षण घेण्यासाठी आर्थिक मदत करणे, त्यांच्यासाठी वसतिगृहे उघडणे, विविध भागात अस्पृश्यांच्या सभा, परिषदा आयोजित करणे, हिंदू धर्मीयांनी बहिष्कृत करून गुलाम बनविलेल्या समाजामध्ये स्वाभिमानाची ज्योत प्रज्वलित करणे इत्यादी कार्ये केली. डॉ. आंबेडकरांनी यांनी यासाठी नियोजनबद्ध कृतीकार्यक्रम राबविले. याचा परिणाम म्हणजे दलित समाजात अस्मितेची नवी उर्जा निर्माण झाली. यामध्ये आंबेडकरी चळवळीतील पहिले आंदोलन म्हणून चवदार तळे सत्याग्रहाचा विचार आपल्याला करावा लागतो.

### चवदार तळे सत्याग्रह :

दलितांच्या प्रश्नांसदर्भात राजकीय पातळीवर नवी जाणीव निर्माण होऊ लागली होती. मुंबई कायदेमंडळात असलेल्या काही प्रतिनिधींनी यासाठी काही ठराव मांडले होते. त्यामध्ये १९२६ रोजी सी.के. बोले यांनी मांडलेला ठराव अतिशय महत्त्वाचा आहे. त्या सार्वजनिक ठिकाणी म्हणजे न्यायालये, शाळा, पाणवठे, बाजार इ. ठिकाणी स्पृश्य-अस्पृश्य असा भेदभाव पाळला जाऊ नये. असा ठराव करण्यात आला होता. याला मान्यताही मिळाली होती. याआधारेच महाड नगरपालिकेत हा ठराव मंजूर करून चवदार तळे अस्पृश्यांना खुले करण्यात आले. मात्र महाडमधील सवर्ण हिंदू लोकांनी याला विरोध केला. याविरुद्ध डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी बहिष्कृत हितकारिणी सभेच्या माध्यमातून १९ व २० मार्च १९२७ रोजी परिषद घेण्यात आली. त्यामध्ये हजारो दलित सहभागी झाले होते. शेवटच्या दिवशी डॉ. आंबेडकर आणि हजारो दलित स्त्री-पुरुषांनी चवदार तळ्यात उतरून त्याचे पाणी प्राशन केले. सामाजिक समतेच्या लढ्यातील, आंबेडकरी चळवळीतील हा मोठा लढा होता.

डॉ. आंबेडकरांनी चवदार तळे सत्याग्रह केल्यानंतर तिथे परिषदेसाठी आलेल्या लोकांवर सवर्ण सनातनी लोकांनी हल्ला केला. जाळपोळ केली, चवदार तळ्याला अभिषेक घालून शुध्द केले आणि अस्पृश्यांना येथे येण्यास बंदी घातली. सरकारने यात हस्तक्षेप करून नये

असेही सांगितले. बाबासाहेबांनी यांचा विरोध केला. पुन्हा परिषद घेण्याचा निर्णय घेतला. मात्र नगरपालिकेनेही यासाठी सहकार्य केले नाही. उलट सवर्ण समाजाची बाजू घेऊन त्यांचीच पाठराखण केली. चवदार तळे सत्याग्रहात सरळसरळ सामाजिक संघर्ष उभा राहिला. अस्पृश्य समाज समतेसाठी लढत होता. आपले हक्क मागत होता. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी केलेला चवदार तळ्याचा सत्याग्रह निर्णायक नसला तरी त्यानिमित्ताने अभूतपूर्व अशा दलितांच्या लढ्याला सुरुवात झाली. सर्व दलित समाज एकत्र आला. आपल्यावर लादलेल्या अस्पृश्यतेच्या विरोधात त्यांनी एकसंघ आवाज उठविला. ज्या मनुस्मृतीच्या आधारे जातीव्यवस्था प्रस्थापित करण्यात आली होती. गुलामगिरी लादलेली होती. त्या मनुस्मृतीचे दहन याच चवदार तळ्याच्या सत्याग्रहात करण्यात आले. ही ऐतिहासिक घटना होती. यामध्ये केवळ दलित समुहच नव्हता तर दलितेतर समाजही यामध्ये सहभागी झाला होता. विशेषतः दलित स्त्रीयांचे प्रमाण यामध्ये खूप मोठ्या प्रमाणात होते. आंबेडकरी चळवळीतील चवदार तळे सत्याग्रह म्हणजे समता संग्रह होते.

ब्रिटीश शासनाने १९२८ मध्ये सर जॉन सायमन यांच्या नेतृत्वाखाली एक मंडळ भारतात पाठविले. या मंडळाचा उद्देश राजकीय होता. डॉ. आंबेडकरांनी बहिष्कृत हितकारणी सभेच्या वतीने या मंडळाला एक निवेदन दिले. ज्यामध्ये विधी मंडळात अस्पृश्यांना स्वतंत्र जागा असाव्यात असा आग्रह त्यांनी धरला. मात्र भारतात सायमन कमिशनला विरोध झाला. म्हणून गोलमेज परिषदेचे आयोजन करण्यात आले. डॉ. आंबेडकरांनी या दरम्यान आपले सामाजिक कार्य चालूच ठेवले होते. याचाच एक भाग म्हणजे काळाराम मंदिर सत्याग्रह होय.

### काळाराम मंदिर सत्याग्रह :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी १९३० मध्ये नाशिक येथील काळाराम मंदिरात सामुदायिक प्रवेश करण्याची घोषणा केली. बाबासाहेबांनी आपल्या सामाजिक कार्याला नवी दिशा देण्याचा प्रयत्न केला. महाड येथील चवदार तळ्याचा सत्याग्रह केल्यानंतर त्यांनी मंदिर प्रवेशाची चळवळ उभारली. वास्तविक त्यांना मंदिरामध्ये जाऊन देवदर्शन घेण्याचा अथवा दलित समाजाला येथे घेऊन जाण्यात कोणतेही स्वारस्य नव्हते. परंतु पारंपरिक जात मानसिकतेला छेद देण्याच्या मुख्य उद्देशातून त्यांनी हे आंदोलन चालू केले होते. मागील अनुभव लक्षात घेता काळाराम मंदिर प्रवेशासंदर्भात त्यांनी रितसर पत्रव्यवहार करून जोरदार तयारी केलेली होती. दादासाहेब गायकवाड हे बाबासाहेबांचे प्रमुख शिलेदार होते. त्यांच्याशी चर्चा करून आंदोलनाचे स्वरूप ठरविण्यात आलेले होते. २ मार्च १९३० रोजी या सत्याग्रहास सुरुवात झाली. त्यावेळी डॉ. आंबेडकरांनी या सत्याग्रहामागील भूमिका विशद केली. ते म्हणाले, आज आपण मंदिरात प्रवेश करणार आहोत. मंदिरामध्ये प्रवेश केल्यामुळे आपले प्रश्न सुटणार नाहीत. आपले प्रश्न राजकीय आहेत. सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक व शैक्षणिक आहेत. काळाराम मंदिरात प्रवेश करणे म्हणजे हिंदू मनाला केलेले आवाहन आहे. उच्चवर्गीय हिंदूंनी आपल्याला आपल्या हक्कांपासून अनेक पिढ्यांपासून दूर ठेवले. आता तेच हिंदू आपल्याला आपला मानवी हक्क देतील का हा प्रश्न या काळाराम मंदिर सत्याग्रहाच्या माध्यमातून मी विचारत आहे. हिंदू मन हे आपल्याला एक मानव म्हणून स्वीकारण्यास तयार आहे की नाही याची पडताळणी या सत्याग्रहाद्वारे होणार आहे. डॉ. आंबेडकरांनी आपल्या अनुयायांना या सत्याग्रहाचे महत्त्व सांगितले होते. याचा फलित

म्हणजे हजारो लोक या सत्याग्रहात सामील झाले. नियोजनबद्ध पद्धतीने आंदोलन करण्यात आले. परंतु सवर्ण लोकांनी इथेही आपली विषमतावादी मानसिकता दाखविली. सत्याग्रहाच्या वेळी दगडफेक झाली. अनेकांना इजा झाली. बाबासाहेबांनी या सर्व घटनेची तक्रार ब्रिटीश सरकारकडे केली. नाशिकमध्ये दलितांवर बहिष्कार घालण्यात आला. मानसिक त्रास दिला गेला. तरीसुद्धा सत्याग्रही मागे हटले नाहीत. तब्बल पाच वर्षे हा लढा चालूच होता. भाऊराव गायकवाड यांनी त्याचे नेतृत्व केले. दरम्यान डॉ. आंबेडकरांना गोलमेज परिषदेला जावे लागले. देशपातळीवर राजकीय संघर्ष सुरू झाला. हिंदू समाजाची मानसिकता बदलणार नाही. हे बाबासाहेबांच्या लक्षात आले. त्यामुळे त्यांनी काळाराम मंदिर सत्याग्रह मागे घेतला. आंबेडकरी चळवळीच्या इतिहासात या सत्याग्रहाला विशेष महत्त्व आहे. कारण याठिकाणी महाराष्ट्राबरोबरच गुजरात, कर्नाटक राज्यातील लोक आलेले होते. विशेषतः एवढ्या प्रदीर्घ काळापर्यंत लढा दिला. हे अतिशय महत्त्वाचे आहे.

### गोलमेज परिषद :

आंबेडकरी चळवळीच्या इतिहासात गोलमेज परिषदांना अतिशय महत्त्वाचे स्थान आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आपल्या समाजाच्या हक्कासाठी सातत्याने लढत होते. या लढ्यात त्यांना राष्ट्रीय पातळीवर संघर्ष करावा लागला. गोलमेज परिषदांच्या निमित्ताने या संघर्षाला नवी धार आली. ब्रिटीश सरकारने भारताला स्वातंत्र्य देण्याच्या भूमिकेतून भावी राज्यघटनेची चर्चा करण्यासाठी जी परिषद बोलावली होती. तिला गोलमेज परिषद असे म्हणतात. या परिषदेच्या एकूण तीन बैठका संपन्न झाल्या. या तीनही बैठकांना डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे अस्पृश्य समाजाचे प्रतिनिधी म्हणून उपस्थित राहिले होते. पहिली गोलमेज परिषद नोव्हेंबर १९३० मध्ये लंडन येथे भरली. डॉ. आंबेडकरांनी यामध्ये सहभाग घेऊन दलितांच्या राजकीय अस्तित्वाविषयी मांडणी केली. अस्पृश्यांसाठी स्वतंत्र मतदारसंघ तयार करून त्यांच्या मार्फतच अस्पृश्यांचे प्रतिनिधी निवडले गेले पाहिजे. अशी जोरदार भूमिका बाबासाहेबांनी मांडली. परंतु राष्ट्रीय काँग्रेसने या परिषदेवर बहिष्कार घातला. त्यामुळे दुसरी परिषद सप्टेंबर १९३१ रोजी बोलावण्यात आली. म. गांधी यांनी दुसऱ्या बैठकीत सहभाग घेतला. डॉ. आंबेडकरांच्या मागणीला त्यांनी विरोध केला. शेवटी नोव्हेंबर १९३२ मध्ये तिसरी गोलमेज परिषद बोलावण्यात आली. परंतु काँग्रेसने यावरही बहिष्कार घातला. याचा परिणाम म्हणजे ब्रिटीशांनी जातीय निवाडा जाहीर केला. त्याला कम्युनल अवार्ड असे म्हणतात. यामध्ये दलित वर्गासाठी स्वतंत्र मतदारसंघाची मागणी मान्य करण्यात आली. याला म. गांधी यांनी मोठा विरोध केला.

### पुणे करार :

दलित समाजाच्या हक्कासाठी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अहोरात्र झगडत होते. मात्र त्यांना प्रस्थापित वर्गाकडून प्रचंड विरोध होत होता. म. गांधी यांनी गोलमेज परिषदेच्या निमित्ताने दलितांना मिळालेल्या स्वतंत्र मतदारसंघाला विरोध केला. सप्टेंबर १९३२ मध्ये ते पुणे येथील येरवडा कारागृहात उपोषणाला बसले. याचाच परिपाक म्हणजे पुणे करार होय. या कराराला आंबेडकरी चळवळीत विशेष महत्त्वाचे स्थान आहे. डॉ. बाबासाहेबांनी आपल्या तेजस्वी वाणी आणि बुद्धिमत्तेच्या आधारे दलितांच्या उत्थानाची चळवळ निर्णायक स्थितीत आणली होती. सामाजिक गुलामगिरी नष्ट करायची असेल तर दलितांना राजकीय

अस्तित्व प्राप्त झाले पाहिजे. कारण त्याशिवाय परिवर्तन होणार नाही. याची जाणीव डॉ. आंबेडकरांना होती. यासाठीच ते दलित समाजाच्या राजकीय हक्काचा आग्रह धरत होते. परंतु म. गांधी यांनी दलित हे वेगळे नाही. ते हिंदू समाजाचाच एक भाग आहेत. त्यामुळे त्यांना स्वतंत्र अस्तित्व देवू नये. असा आग्रह धरला. डॉ. आंबेडकर यांनी म. गांधी यांच्या या विचाराचा विरोध केला. हजारो वर्षांपासूनची सामाजिक गुलामगिरी भोगत असलेल्या दलितांना सामाजिक न्याय मिळणार कधी? हा त्यांचा मूलभूत प्रश्न होता. यातूनच म. गांधीजींच्या उपोषणाला त्यांनी विरोध केला. याचा परिणाम म्हणजे बाबासाहेबांच्या विरोधात सर्व सवर्ण समाज एकत्र झाला. गांधीजींच्या बिघडत चाललेल्या तब्येतीचा विचार करून आणि व्यापक सामाजिक हित लक्षात घेऊन डॉ. आंबेडकर आणि म. गांधी यांच्यात २४ सप्टेंबर १९३२ करार झाला. उपोषण समाप्त झाले. मात्र दलितांच्या हिता आड येणाऱ्या हिंदू समाजाविषयी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांची खात्री झाली की, ते दलितांना कधीही न्याय देणार नाहीत. यासाठीच त्यांनी १३ ऑक्टोबर १९३५ रोजी नाशिक जिल्ह्यातील येवला याठिकाणी भरलेल्या प्रांतिक दलित परिषदेत, "मी हिंदू म्हणून जन्माला आलो असलो तरी मी हिंदू म्हणून मरणार नाही". अशी घोषणा केली. जी ऐतिहासिक स्वरूपाची होती.

### स्वतंत्र मजूर पक्ष :

आंबेडकरी चळवळीच्या इतिहासात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी स्थापन केलेल्या राजकीय पक्षांना अतिशय महत्वाचे स्थान आहे. १५ ऑगस्ट १९३६ रोजी डॉ. आंबेडकरांनी स्वतंत्र मजूर पक्ष या राजकीय पक्षाची स्थापना करण्याची घोषणा केली. एका बाजूला सामाजिक चळवळीत दलितांच्या हक्काचा विचार केला जात नाही. तर दुसऱ्या बाजूला त्यांना राजकीय अस्तित्व प्राप्त करू दिले जात नाही. त्यामुळे बाबासाहेबांनी १९३५ ला ब्रिटीश संसदेने पारित कायदानुसार १९३७ मध्ये होणाऱ्या निवडणुका लक्षात घेऊन स्वतंत्र मजूर पक्षाची मांडणी केली होती. याचा फायदा निवडणुकीत झाला. सर्व समाजातील लोकांना घेऊन बाबासाहेब निवडणुकीत उतरले. त्यामध्ये त्यांचे मुंबई विधानसभेत १६ आणि मध्यप्रांत आणि बेरार विधीमंडळात ७ असे एकूण २३ प्रतिनिधी निवडून आले. हा आंबेडकरी चळवळीतील मोठा विजय होता. याचे पडसाद स्वाभाविकच सामाजिक पातळीवर पडले. पुढे स्वतंत्र मजूर पक्षाने १९३९ पर्यंत अत्यंत महत्वाची कामगिरी पार पाडली. विधीमंडळात त्यांचा दबदबा होता. विविध सामाजिक प्रश्नांची मांडणी याठिकाणी करण्यात आली. म. गांधी यांनी दिलेल्या हरिजन शब्दाला विरोध, वर्धा शिक्षण पध्दतीवरील टिका, शासनाचे १९३५ च्या कायद्याचे पालन करत अनुसूचित जातींच्या शैक्षणिक विकासासाठी प्रयत्न करण्याविषयीची भूमिका घेतली. याचा परिणाम म्हणजे दलितांच्या सामाजिक गुलामगिरीविरुद्ध आवाज उठवला गेला. शासनाने अस्पृश्यांना मंदिर प्रवेश कायदा संमत केला. खोतीशाही किंवा जमीनदारी नष्ट करण्याविषयी विधेयक मांडण्यात आले. मजुरांना संप करण्याचा अधिकार असावा यासाठी संप केला. अशा विविध माध्यमातून स्वतंत्र मजूर पक्षाने यशस्वी वाटचाल केली. परंतु पुढे ब्रिटीश सरकारने क्रिप्स योजना आणली. देशात स्वातंत्र्याचे वारे वाहू लागले. १९४२ मध्ये तर परिस्थिती पूर्ण बदलली. मजूर पक्षाचे कामही मंदावले. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या उद्देशाप्रमाणे समाजातील सर्व जाती एकत्र येऊ शकल्या नाहीत. क्रिप्स समोर डॉ. आंबेडकर साक्ष देण्यासाठी गेल्यानंतर त्यांच्यापुढे प्रश्न होता की मजुरांच्या की अस्पृश्य समाजाचे प्रतिनिधी

म्हणून जायचे. अशा वेळी बाबासाहेबांनी शेड्युलड कास्ट फेडरेशन नावाचा राजकीय पक्ष स्थापन करून दलितांच्या हक्कासाठी पुढे लढा देण्याचा निर्धार केला.

दलित साहित्याच्या  
चळवळीची पार्श्वभूमी

### शेड्युलड कास्ट फेडरेशन :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी १९४२ मध्ये नागपूर येथे अस्पृश्यांची एक परिषद बोलावली. त्यामध्ये शेड्युलड कास्ट फेडरेशन या नावाचा राजकीय पक्ष स्थापन करण्याचे निश्चित करण्यात आले. वास्तविक यामागे बाबासाहेबांची व्यापक, समाजहितवादी भूमिका होती. कारण प्रारंभापासून बाबासाहेब दलित समाजाला न्याय, हक्क आणि अधिकार मिळावेत यासाठी प्रयत्न करत होते. परंतु दलितेतरांनी त्यांना समजून घेतले नाही. त्यामुळे ब्रिटीश शासनाच्या अंतिम टप्प्यात निर्णायक क्षणी जर आपण दलितांच्या भवितव्याचा विचार करून योग्य भूमिका घेतली नाही तर याची फार मोठी किंमत मोजावी लागणार होती. म्हणून शेड्युलड कास्ट फेडरेशन स्थापनेचा निर्णय बाबासाहेबांनी अत्यंत जबाबदारीने घेतला होता. शेड्युलड कास्ट फेडरेशनच्या स्थापनेमुळे देशातील अस्पृश्य समाजाच्या मनात नवा विश्वास निर्माण झाला. सर्वत्र याची मार्चेबांधणी करण्यात आली. प्रत्येक राज्यात शाखा स्थापन करण्यात आल्या. अधिवेशने भरविण्यात आली. अस्पृश्य समाजाच्या स्वतंत्र राजकीय अस्तित्वाची मांडणी करण्यात आली. १९४६ ला सार्वत्रिक निवडणुका झाल्या. परंतु संयुक्त मतदार संघ पद्धती असल्यामुळे फेडरेशनचे उमेदवार पराभूत झाले. परंतु डॉ. आंबेडकरांनी सर्वांना समजावून सांगितले. पुढे १९५२ च्या निवडणुकीत दोन प्रतिनिधी निवडणून आले. शेड्युलड कास्ट फेडरेशनच्या राजकीय दृष्टिकोणातून अपयशी झाले असले तरी सामाजिकदृष्ट्या दलितांमध्ये एकोपा आणि संघर्ष करत राहण्याची जिद्द मात्र यातून मिळाली. पुढे रिपब्लिकन पक्षाची निर्मिती होऊन दलितांच्या राजकारणाला नवी दिशा मिळाली.

### भारतीय संविधान निर्मिती :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या जीवनातील एक महत्त्वाची उपलब्धी म्हणजे भारतीय संविधानाची निर्मिती होय. आंबेडकरी चळवळीत याला पायाभूत स्थान आहे. १५ ऑगस्ट १९४७ ला भारत देश स्वतंत्र झाला. या स्वतंत्र भारताची घटना तयार करण्यासाठी घटना समितीची स्थापना झाली. याचे अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद होते. तर घटनेचा मसुदा तयार करण्याच्या समितीचे अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर होते. बाबासाहेबांनी अनेक दिवस कष्ट, परिश्रम करून लोकशाही विचारांवर आधारित भारतीय घटना तयार केली. २६ नोव्हेंबर १९४९ रोजी ती घटना मंजूर करण्यात आली. २६ जानेवारी १९५० पासून घटनेचा अंमल सुरू झाला. भारत एक लोकशाही देश म्हणून वाटचाल करून लागला. यामध्ये डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे योगदान अतिशय महत्त्वाचे आहे. त्यांनी जगातील सर्व घटनांचा अभ्यास करून आपल्या देशातील बुध्दपूर्व काळापासूनचा अभ्यास करून संविधानाचा मसुदा तयार केला. हे संविधान म्हणजे सामाजिक न्यायाचे प्रतीक आहे. दलित चळवळीमध्ये याच सामाजिक न्यायाची बाजू घेऊन भारतीय संविधानाला प्रमाण मानले जाते. यामागे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे कार्यकर्तृत्व आहे.

**धम्मक्रांती :**

१४ ऑक्टोबर १९५६ रोजी विजयादशमीच्या दिवशी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपल्या लाखो अनुयायांबरोबर नागपूर येथे बौद्ध धम्माचा स्वीकार केला. वास्तविक हे धर्मांतर नव्हते तर ती एक सांस्कृतिक क्रांती होती. तिला धम्मक्रांती असे म्हणतात. डॉ. आंबेडकरांनी सातत्याने दलितांना सामाजिक न्याय मिळावा म्हणून प्रयत्न केले. सुरवातीला निवेदने दिली. सत्याग्रह केले. सभा, परिषदा भरवल्या. परंतु इथली हिंदू समाज मानसिकता बदलायला तयार होत नव्हती. उलट दलित ज्यावेळी आपल्या हक्कासाठी लढू लागले. त्यावेळी त्यांचा त्यांना प्रचंड विरोध करण्यात आला. त्यांचा छळ केला गेला. त्यांना वाळीत टाकण्यात आले. राजकीय पातळीवर त्यांची कोंडी करण्यात आली. या सर्व गोष्टी डॉ. आंबेडकरांनी पाहिल्या, अनुभवल्या होत्या. त्यामुळे १९३६ मध्येच त्यांनी येवला येथे मी हिंदू म्हणून मरणार नाही अशी घोषणा केली होती. हा संपूर्ण समाजला इशारा होता. परंतु याची दखल सर्व समाजाने घेतली नाही. याचा परिपाक म्हणजे बाबासाहेबांनी केलेला बौद्ध धम्म स्वीकार होय. भारताच्या इतिहासात इ.स. पूर्व काळात गौतम बुद्धांनी बौद्ध धम्माची स्थापना केली. हा रूढ अर्थाने धर्म नव्हता. तर तो जीवनमार्ग होता. नैतिक आचाराचा दीपस्तंभ होता. स्वातंत्र्य, समता आणि बंधुता ही मूल्ये त्यामध्ये महत्त्वाची होती. कोणत्याही विषमतेला नकार देण्याचे कार्य बौद्ध धम्मात केले जाते. म्हणून बाबासाहेबांनी बौद्ध धम्माचा मार्ग स्वीकारला. मुक्ती कोण पथे या भाषणात बाबासाहेबांनी आपल्या धम्मक्रांतीची पार्श्वभूमी सांगितली आहे. तर बुद्ध आणि त्यांचा धम्म या ग्रंथात धम्माचे महत्त्व विशद केलेले आहे. जे क्रांतिकारक आहे.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे समग्र व्यक्तिमत्त्व आणि कार्यकर्तृत्व अद्वितीय होते. त्यांनी प्रारंभापासून चिंतनशीलपणे दलित समाजाचा शोध घेतला. आपल्या ग्रंथातून मूलभूत मांडणी केली. भारतातील जाती : त्यांची उत्पत्ती आणि विकास, रुपयाचा प्रश्न, क्रांती आणि प्रतिक्रांती, अस्पृश्य मूळचे कोण आणि ते अस्पृश्य कसे बनले, शूद्र पूर्वी कोण होते, राज्य आणि अल्पसंख्यांक हे त्यांचे महत्त्वाचे ग्रंथ आहेत. बाबासाहेबांनी विविध वृत्तपत्रे चालवली. त्यातून समाजाला दिशा देणारे लेखन केले. त्यामध्ये मूकनायक, बहिष्कृत भारत, जनता, समता, प्रबुद्ध भारत यांचा समावेश होतो. डॉ. आंबेडकरांची भाषणे ही आंबेडकरी चळवळीचा दस्तऐवज आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे युगनायक होते. त्यांनी या देशातील दलितांच्याच नव्हे तर भारतीय समाजाच्या जीवनात अमूलाग्र बदल घडविला. आपल्या कार्यातून नवा काळ उभा केला. नवे अस्मितादर्शन घडविले. त्यामुळे आंबेडकरी चळवळीचा कालखंड हा भारतीय इतिहासातील सुवर्णयुग आहे. हे सूर्यसत्य कोणीही नाकारू शकणार नाही.

**आंबेडकरोत्तर चळवळ**

६ डिसेंबर १९५६ रोजी महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे महापरिनिर्वाण झाले. त्यांच्या आकस्मित जाण्यामुळे संपूर्ण दलित समाज पोरका झाला. बाबासाहेबांच्या नेतृत्वाखाली चालू असलेल्या समाजोद्धाराच्या कार्याला खंड पडला. एक प्रकारची पोकळी निर्माण झाली. जी पुढे कधीच भरून निघणारी नव्हती. आंबेडकरोत्तर कालखंडातील चळवळींचा स्वतंत्र इतिहास आहे. गेल्या पन्नास साठ वर्षांमध्ये यामध्ये मोठ्या प्रमाणात स्थित्यंतरे झालेली आहेत. त्यामुळे याचाही स्वतंत्रपणे विचार करणे अगत्याचे आहे.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपल्या राजकीय जीवनात विविध प्रकारचा संघर्ष करत दलितांना सामाजिक, राजकीय अस्तित्व मिळवून दिले. स्वतंत्र मजूर पक्ष, शेड्युल्ड कास्ट फेडरेशन इ. पक्षांच्या माध्यमातून त्यांनी केलेले कार्य अतुलनीय आहे. परंतु बाबासाहेबांच्या राजकारणाला सातत्याने नामोहरण करण्यासाठी प्रस्थापित पक्षांनी जाणीवपूर्वक प्रयत्न केले. शेवटी त्यांना यश आले नाही. कारण डॉ. आंबेडकरांचा राजकीय विचार क्रांतिकारक होता. आयुष्याच्या शेवटी बाबासाहेबांनी रिपब्लिकन पक्षांची संकल्पना मांडली. आपल्या कार्यकर्त्यांना खुले पत्र लिहून त्यांनी रिपब्लिकन पक्षांची स्थापना करण्याची तयारी केली. हा पक्ष सर्वांसाठी खुला असावा आणि त्याने इतर बहुसंख्यांक पक्षांशी युती करून राजकारणात आपले अस्तित्व उभे करावे अशी त्यांची भूमिका होती. यासाठी त्यांनी राममनोहर लोहिया, एस.एम.जोशी, प्र.के.अत्रे अशा नेत्यांशी विचारविनिमय करणारी पत्रे लिहिली. परंतु अचानक त्यांचे महापरिनिर्वाण झाले. त्यामुळे या पक्षांची प्रत्यक्ष स्थापना ते करू शकले नाहीत.

१९५७ ला नागपूर येथे दलित नेत्यांची सभा भरली. या सभेमध्ये डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे शेवटचे राजकीय स्वप्न म्हणून शेड्युल्ड कास्ट फेडरेशन बरखास्त करून ३ ऑक्टोबर १९५७ रोजी रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया या नावाने पक्ष स्थापन करण्यात आला. बाबासाहेबांचे निकटवर्ती एन. शिवराज (मद्रास) यांची निवड अध्यक्ष म्हणून करण्यात आली. नवीन कार्यकारणी घोषित करून विविध प्रांतातील सदस्य निवडले गेले. पक्षाची घटना तयार करण्यात आली. त्यामध्ये भारतीय सरनाम्यात व्यक्त केलेल्या न्याय, स्वातंत्र्य आणि बंधुता हेच रिपब्लिकन पक्षाचे ध्येय ठरविण्यात आले. (भारतीय रिपब्लिकन पक्ष : डॉ. रा. का. क्षीरसागर) दादासाहेब गायकवाड हे रिपब्लिकन पक्षाचे ज्येष्ठ नेते होते. त्यांनी भूमिहीनांचा प्रश्न घेऊन लढा उभारला. १९५९ मध्ये औरंगाबाद येथे रिपब्लिकन पक्षाचे पहिले अधिवेशन भरले. यामध्ये जमिनीचे राष्ट्रीयकरण करण्यात यावे, सामुदायिक शेती करावी यासारखे ठराव करण्यात आले. दादासाहेब गायकवाड यांच्या नेतृत्वाखाली धुळे, जळगाव आणि नाशिक येथे पक्षाने सत्याग्रह केले. रिपब्लिकन पक्ष नवनिर्मितीसाठी धडपडत होता. परंतु त्याला म्हणावेसे यश प्राप्त होत नव्हते.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या महापरिनिर्वाणानंतर दलित चळवळीत फार मोठी पोकळी निर्माण झाली. ती भरून काढण्यासाठी सामुदायिक नेतृत्वाची कल्पना पुढे येऊन अठरा नेत्यांचे प्रेसिडियम स्थापन करण्यात आले. मात्र हे नेतृत्व कोणाला मान्य झाले नाही. जुन्या नव्या कार्यकर्त्यांत मतभेद वाढत गेले. १९५९ मध्येच रिपब्लिकन पक्षात दुरुस्त आणि नादुरुस्त अशी फुट पडली. आवळे, बी.सी.कांबळे व दादासाहेब रुपवते यांच्या नेतृत्वाखाली दुरुस्त गटाने आपली वेगळी चुल मांडली. महाराष्ट्रात संयुक्त महाराष्ट्र चळवळीतून हा गट बाजूला झाला. पहिल्या गटाने कार्य करण्याचा प्रयत्न केला. परंतु डाव्या पक्षांबरोबरच्या १९६२ निवडणुकीत पराभव पत्कारावा लागला.

महाराष्ट्र राज्याच्या स्थापनेपासून काँग्रेस पक्षाचे सामर्थ्य वाढत गेले. हे लक्षात घेऊन दादासाहेब गायकवाड यांच्या गटाचा कल हळूहळू काँग्रेसकडे झुकला. १९६७ च्या निवडणुकीत या गटाने काँग्रेसशी युती करण्याचा प्रयत्न केला. परंतु याला यश आले नाही.

मात्र पुढे १९६७ च्या सार्वत्रिक निवडणुकीनंतर जिल्हा परिषद व नगरपालिकांच्या निवडणुका झाल्या. गायकवाड गटाने काँग्रेसशी युती केली. याचा थोडा फायदा रिपब्लिकन पक्षाला झाला. परंतु सामाजिक न्यायाच्या लढ्यात त्यांना फारसे यश आले नाही. उलट रिपब्लिकन चळवळ काँग्रेसमध्ये विलीन होऊ लागली. पक्षाची वाताहत झाली. आता रिपब्लिकन पक्षाचे अनेक गट निर्माण झालेले आहे. प्रत्येक नेता आपले नाव रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया या नावासमोर टाकतो आहे. निवडणुकीत प्रस्थापित पक्षांची युती, आघाडी करूनही त्यांना यश येत नाही. रिपब्लिकन ऐक्याचे अनेक प्रयत्न झाले. परंतु त्याला यश मिळाले नाही. आज हा पक्ष आपले अस्तित्व शोधत आहे. असे असले तरी दलित चळवळीत डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या स्वप्नातील पक्ष म्हणून अजूनही रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडियाला जनमनात महत्त्वाचे स्थान आहे. तळागळातील दलित समुहांना रिपब्लिकन पक्षावर विश्वास आहे. कोणतेही सामाजिक आंदोलन असो रिपब्लिकन नेते रस्त्यावर उतरून लढा देतात, मोर्चे काढतात, तरुणांमध्येही रिपब्लिकन पक्षाचा विचार पोहचत आहे. बाबासाहेबांचे राजकीय स्वप्न म्हणून रिपब्लिकन पक्षाची वाटचाल चालू आहे. तिला निर्णायक रूप येत नाही. हे वास्तव असले तरी भारतीय राजकारणात रिपब्लिकन पक्षाचा वाटा महत्त्वाचा आहे.

### दलित पँथर :

आंबेडकरोत्तर दलित चळवळीत एक क्रांतीपर्व म्हणून दलित पँथरच्या आंदोलनाला ओळखले जाते. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या पश्चात रिपब्लिकन पक्षाचे अस्तित्व धोक्यात आले. सामाजिक चळवळीत फारसा जोर राहिला नाही. दुसरीकडे दलितांवरील अन्याय अत्याचार वाढू लागले. १९७१ मध्ये इलाया पेरूमल समितीचा अहवाल प्रसिध्द झाला. त्यामधून या अन्यायांची नोंद घेतली गेली. याचा परिणाम म्हणजे दलितांवरील अन्यायाविरुद्ध आवाज उठविणारे संघटन उभे राहण्याची गरज दलित तरुणांच्या मनात प्रकर्षाने झाली. याचाच आविष्कार म्हणजे 29 मे 1972 रोजी दलित पँथरची स्थापना करण्यात आली. ९ जुलै १९७२ रोजी दलित पँथर चा पहिला जाहिर मेळावा आयोजित करण्यात आला..

दलित पँथर ही आंबेडकरी तरुणांची विद्रोही संघटना होती. यात कवी, लेखक, साहित्यिक, कलावंत, विचारवंत होते. यांना आंबेडकरवादाचे वैचारिक अधिष्ठान होते. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा क्रांतिकारक विचार त्यांनी आत्मसात केलेला होता. नामदेव ढसाळ, राजा ढाले, ज.वि.पवार, अरुण कांबळे, रामदास आठवले इत्यादी लढवय्यी नेतेमंडळी यांनी दलित पँथर उभी केली. परंपरावादी विचारांना विरोध, प्रस्तापित समाजव्यवस्थेतील विषमतेविरुद्ध आवाज उठविण्याचे कार्य पँथरने केले. विशेषतः मराठी साहित्यातील मध्यवर्ती प्रवाहाला यांनी नकार दिला. त्यांच्याविरुद्ध विद्रोह पुकारला. आपल्या लेखनीतून आंबेडकरवादी जीवन जाणिवांची मांडणी केली. पँथर हा निर्भय होता. त्याची बेदरकार वृत्ती आणि क्रांतीची भाषा सर्वांना आकर्षित करत होती. त्यामुळे दलित तरुण यात मोठ्या प्रमाणात सहभागी झाले. महाराष्ट्रात सुरू झालेली पँथर लवकरच देशातील गुजरात, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश, उत्तर प्रदेश इ. राज्यांमध्येही विस्तारीत झाली. दलित पँथरने अनुसूचित जाती व जमाती, बौद्ध, कष्टकरी जनता, कामगार, गरीब शेतकरी आणि शेतमजूर या सर्वांना एकत्र आणून सर्वंकष आर्थिक, राजकीय व सामाजिक क्रांती घडवून आणण्याची

आवश्यकता मांडली. त्यांनी भूमिहीनांचे प्रश्न सोडविण्याचा प्रयत्न केला. खेड्यातील जातिव्यवस्था, सरंजामशाहीला विरोध केला. शेतमजुरी दर वाढविण्याचे प्रयत्न केले. दलितांना रोजगार मिळाला पाहिजे. मोफत शिक्षण मिळायला हवे. स्वस्त धान्य, निवाऱ्याची सोय असली पाहिजे. दलितांचे आर्थिक शोषण थांबले पाहिजे यासाठी दलित पँथरने लढा दिला.

दलित पँथरचा प्रभाव वाढत असतानाच प्रस्थापित व्यवस्थेकडून तिच्यामध्ये फूट पाडण्यासाठी प्रयत्न चालू झाले. दलितांमधील असे लढाऊ संघटन वाढत गेल्यास जातकेंद्री व्यवस्थेला शह बसू शकतो. यासाठी दलित पँथरला फोडण्याचे प्रयत्न झाले. यात प्रारंभी यश आले नाही. परंतु १९७७ मध्ये सार्वत्रिक निवडणुका आल्या आणि पँथर राजकारणात ओढली गेली. तिला जाणीवपूर्वक यात गुंतवले गेले. याची ठिणगी राजा ढाले आणि नामदेव ढसाळ यांच्यातील मतभेदापासून झाले. राजा ढाले यांनी पँथरमधून बाहेर पडून 'मास मुव्हमेंट' नावाची नवी संघटना स्थापन केली. हळूहळू पँथरमध्ये विभाजने होऊ लागले. तिच्यात गटतट पडले. आंबेडकरोत्तर काळातील एक क्रांतिकारक संघटना लयास गेली. दलित पँथरचा काळ हा दलितांच्या सामाजिक-सांस्कृतिक लढ्यातील उज्वस्वी पर्व होते. पँथरने दलित साहित्याच्या चळवळीला दिशा दिली. यातूनच लेखकांची पिढी उभी राहिली. मराठवाडा विद्यापीठाला डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे नाव देण्यासाठी जो ऐतिहासिक लढा महाराष्ट्रात उभा राहिला त्यामागे दलित पँथरचे योगदान अतिशय महत्वाचे आहे.

### मराठवाडा विद्यापीठ नामांतर लढा :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या विचारकार्यातून महाराष्ट्राच्या कानाकोपऱ्यात समाजपरिवर्तन झालेले होते. विशेषतः बाबासाहेबांनी केलेले शैक्षणिक कार्य यात अतिशय महत्वाचे आहे. बाबासाहेबांनी 'पिपल्स एज्युकेशन सोसायटीची' स्थापना केली. या संस्थेच्या माध्यमातून विविध महाविद्यालये स्थापन करण्यात आली. १९५० मध्ये औरंगाबाद येथे मिलिंद महाविद्यालय स्थापन करण्यात आले. नागसेन परिसरात उभे राहिलेल्या या महाविद्यालयाने दलित चळवळीला उभारी दिली. ते चळवळीचे केंद्र बनले. मराठवाड्यातील अनेक विद्यार्थी या महाविद्यालयात प्रवेश घेऊन शिक्षित झाले. दलित पँथरची चळवळ येथेच चालली. दरम्यान मराठवाड्याला स्वतंत्र विद्यापीठ असावे अशी मागणी पुढे आली. शासनाने २७ एप्रिल १९५७ रोजी न्यायमूर्ती पळणीटकर यांच्या अध्यक्षतेखाली समिती स्थापन करण्यात आली. या समितीच्या अहवालानुसार २३ ऑगस्ट १९५८ रोजी मराठवाडा विद्यापीठ स्थापन करण्यात आले. ७ जुलै १९७७ रोजी दलित पँथरच्या माध्यमातून गंगाधर गाडे यांनी मराठवाडा विद्यापीठाला डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे नाव द्यावे अशी मागणी केली. त्यामागे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी मराठवाड्याच्या शैक्षणिक विकासात मिलिंद कॉलेजच्या माध्यमातून निर्माण केले कार्य होते. या मागणीला विविध विद्यार्थी संघटनांनी पाठिंबा दिला. सरकारने याची दखल न घेतल्यामुळे विविध आंदोलने, मोर्चे निघाले. याचा परिणाम म्हणजे २५ जुलै १९७७ रोजी विद्यापीठ कार्यकारणीने विद्यापीठ नामांतराचा ठराव पास केला. तो ठराव २७ जुलै १९७८ रोजी महाराष्ट्राच्या विधीमंडळाच्या दोन्ही सभागृहमध्ये पारीत करण्यात आला.

दलित चळवळीच्या वाटचालीतील हे मोठे यश होते. मात्र हा आनंददायी क्षण इथल्या प्रस्थापित व्यवस्थेला पाहावला नाही. नामांतरला मराठवाड्यातील जातीयवादी संघटनांनी विरोध केला. प्रचंड मोठ्या प्रमाणात याचे पडसाद ग्रामीण भागात पडले. दलितांची घरे जाळण्यात आली. गावागावात दलितांवर अन्याय अत्याचार करण्यात आले. प्रस्थापित व्यवस्था क्रूरपणे वागली. यावेळी दलित पँथरसह सर्व दलितांचे नेते एकत्र आले. जोगेंद्र कवाडे यांनी नागपूर ते औरंगाबाद असा लाँग मोर्चा काढला. महाराष्ट्रातील दलित जनता यामध्ये सहभागी झाली. सर्व आंदोलने झाली. यात जनार्दन मवाडे, पोचीराम कांबळे, गौतम वाघमारे शहीद झाले. तब्बल १७ वर्षे हा नामांतर लढा लढला गेला. मराठवाडा विद्यापीठ नामांतर चळवळ ही दलित चळवळीतील इतिहासातील मोठा लढा होता. यात सर्व दलित समाज एकत्र आला. रस्त्यावर उतरला. कितीही अन्याय अत्याचार झाला तरी माघार घ्यायची नाही अशी परखड आंबेडकरवादी भूमिका सर्वांनी स्वीकारली. शेवटी या लढ्याला यश आले. १४ जानेवारी १९९४ रोजी विद्यापीठाचे नाव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विद्यापीठ, औरंगाबाद असे करण्यात आले.

### रिडल्स आंदोलन :

आंबेडकरोत्तर काळात दलितांच्या जीवनात नवे संघर्ष उभे राहिले. ते कधी रस्त्यावरचे तर कधी वैचारिक पातळीवरील होते. वास्तविक ही त्यांच्या अस्मितेची लढाई होती. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे या लढाईतील अस्मितापुरुष होते. त्यांच्या विचारकार्याला विकसित करण्याची प्रतिज्ञा दलित विचारवंतांनी घेतलेली होती. रिडल्स आंदोलन हे याच विचारलढ्यातील एक महत्वाचे आंदोलन होते.

१९८७ रोजी महाराष्ट्र शासनाने डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : लेखन आणि भाषणे खंड ४ प्रकाशित केला. त्यामध्ये डॉ. आंबेडकरांचा रिडल्स इन हिंदूझम हा ग्रंथ समाविष्ट करण्यात आला. यात रामायण आणि महाभारतातील नायक असलेल्या राम आणि श्रीकृष्ण यांच्याविषयी परखड चिकित्सा आलेली होती. ही मांडणी अनेक प्रस्थापित नेत्यांना खटकली. त्यांनी या खंडाचा विरोध केला. मा.गो.वैद्य आणि दुर्गाबाई भागवत यांनी या ग्रंथावर बंदी घालावी अशी मागणी केली. यातून सामाजिक तणाव वाढला. मुंबईत रिडल्स समर्थनार्थ विविध दलित नेत्यांनी परिषद भरवली. त्यात प्रकाश आंबेडकर, रामदास आठवले, राजा ढाले, नामदेव ढसाळ, अरुण कांबळे यांनी सहभाग घेतला. २३ नोव्हेंबर १९८७ रोजी मंत्रालयावर मोर्चा काढला. यात लाखो दलित समाज सहभागी घाला होता. अखेर समर्थक व विरोधक आणि सरकार यांच्यात विचारविनिमय होऊन ग्रंथाच्या खाली या ग्रंथात व्यक्त झालेल्या मतांशी महाराष्ट्र सरकार सहमत असेलच असे नाही. अशी तळटीप टाकण्याच्या तडजोडीवर हा वाद मिटला. या आंदोलनाच्या निमित्ताने दलितांमधील विचारवंतांची तात्त्विक भूमिका समोर आली. त्यामुळे हे आंदोलन दलित चळवळीला नवे वैचारिक परिमाण देऊन गेले.

### खैरलांजी लढा :

महाराष्ट्रातील भंडारा जिल्ह्यात असलेल्या मोहाडी तालुक्यात असलेल्या खैरलांजी या गावात २९ सप्टेंबर २००६ मध्ये भोतमांगे या दलित कुटुंबातील चार लोकांची अमानुष हत्या करण्यात आली. हे हत्याकांड गावातील सवर्ण समाजाने सामुहिकरित्या केले. जातीय

मानसिकतेचा कळस म्हणजे यामधील सुरेखा आणि प्रियंका यांच्यावर सामुहिक बलात्कार करण्यात आला. इतरांची क्रूरपणे हत्या करण्यात आली. या घटनेने संपूर्ण महाराष्ट्र हादरून गेला. देशाच्या संसदेपर्यंत याचे पडसाद पडले. दलितांवरील अन्यायाची ही परिसिमाच होती.

खैरलांजी घटनेच्या विरोधात देशभर दलितांची आंदोलने झाली. ठिकठिकाणी मोर्चे काढण्यात आले. घटनेच्या सात दिवसानंतर सवर्ण समाजातील लोकांवर अॅट्रॉसिटी दाखल करून गुन्हा दाखल करण्यात आला. १५ सप्टेंबर २००८ रोजी न्यायालयाने ८ आरोपींना दोषी ठरविले. विशेष न्यायालयाने सहा आरोपींना फाशी तर दोघांना जन्मठेप सुनावली. मात्र हायकोर्टाने निर्णय बदलला व सर्वांना जन्मठेपेची शिक्षा दिली. या निर्णयाविरोधात सुप्रीम कोर्टात याचिका दाखल करण्यात आली. दरम्यान या हत्याकांडातून बचावलेल्या भैर्यालाल भोतमांगे यांच्या पाठीशी संपूर्ण दलित समाज उभा राहिला. २०१७ मध्ये भैर्यालाल यांचे निधन झाले. अद्यापही दलित समाजाला न्याय मिळाला नाही. खैरलांजीच्या निमित्ताने परत एकदा निर्धारित झाले की प्रस्थापित समाजाची जातीय मानसिकता बदललेली नाही. या देशात दलितांवर सातत्याने अन्याय अत्याचार केले जातात. खैरलांजीनंतर जवखेडा, खर्डा, सोनई अशा ठिकाणी घडलेल्या घटनांनी हे सिध्द केले. अशावेळी दलित समाज एकत्र रस्त्यावर उतरला. याविरुद्ध आंदोलने, मोर्चे निघाले. परंतु पिडीतांना न्याय मिळाला नाही.

दलित चळवळीच्या इतिहासातील आंबेडकरपूर्व, आंबेडकरी आणि आंबेडकरोत्तर चळवळींचा वरील आलेख लक्षात घेता दलित समुहांच्या अस्तित्वाची लढाई प्रारंभापासून लढली गेली. हजारो वर्षांची सामाजिक गुलामगिरी नष्ट करण्यासाठी ही चळवळी उभी राहिली. यात अनेकांनी आपले योगदान दिले. वेळप्रसंगी देहाचे बलिदान दिले. मात्र परिवर्तनाची चळवळ गतिमान ठेवली गेली. आजही आंबेडकरी चळवळ विकसित होत आहे. त्यात चढउतार आले. परंतु तिने आपले स्वतंत्र अस्तित्व राखले. दलित साहित्य चळवळीने या अस्तित्वाला नवा आयाम दिला.

---

## २.४ दलित साहित्य चळवळीचा सामाजिक, सांस्कृतिक, राजकीय चळवळींशी असलेला अनुबंध

---

दलित साहित्याची निर्मिती ही चळवळीतून झालेली आहे. भारताच्या इतिहासात प्राचीन काळापासून जी सामाजिक, सांस्कृतिक व राजकीय चळवळी झाल्या. तसेच महाराष्ट्राच्या भूमिमध्ये निर्माण झालेल्या सामाजिक परिवर्तनाचे आंदोलनाने दलित साहित्याची पायाभरणी केली. इ.स. पूर्व काळात तथागत बुद्ध यांनी वैदिक धर्मातील विषमतवादी तत्त्वांना नाकारून स्वातंत्र्य, समता आणि बंधुता या मानवतावादी मूल्यांची मांडणी केली. समतावादी मूल्यांची रुजवण करण्याचा प्रयत्न केला. याचा परिणाम म्हणजे समाजव्यवस्थेतील शोषित, वंचित, बहिष्कृत समुहांना आत्मभान आले. पुढे काळाच्या परिघात विविध स्थित्यंतरे झाली. दलितांच्या अस्तित्वाचे अनेक प्रश्न निर्माण झाले. परंतु एकोणिसाव्या शतकात यात मोठे परिवर्तन झाले. या काळात ज्या चळवळी निर्माण झाल्या त्यांनी दलित साहित्याच्या पायाभरणीत महत्त्वाची भूमिका बजावली.

एकोणिसावे शतक हे प्रबोधन युग म्हणून ओळखले जाते. या युगाची सुरुवात ब्रिटीश राजवटीत झाली. इंग्रज हे परकीय असले तरी एतदेशीय लोकांच्या कल्याणासाठी त्यांना राजकीय स्तरातून जे कायदे, नियम तयार केले, ज्या सुविधा उपलब्ध करून दिल्या. यातून भारताच्या सामाजिक व सांस्कृतिक जीवनात मोठे परिवर्तन झाले. विविध समाजसुधारणेच्या चळवळी निर्माण झाल्या. तळागळातील समुहांना न्याय, हक्क आणि अधिकार मिळाले. यातून दलित साहित्याच्या निर्मितीला गती मिळाली. ब्रिटीश सरकारने १८१८ नंतर संपूर्ण भारतभर सत्ता स्थापित केली. ब्रिटीशांचे प्राथमिक धोरण हे सत्ताधिकांचे होते. त्यांना या देशातील समाजव्यवस्थेशी देणेघेणे नव्हते. त्यामुळे त्यांनी प्रथमतः पारंपरिक जीवनात हस्तक्षेप केला नाही. परंतु आपली गरज म्हणून त्यांनी भौतिक सुविधा करण्यास सुरुवात केली. शिक्षण क्षेत्रातील बदल हे मोठे परिवर्तन होते. भारतीय परंपरेत शिक्षणाचा अधिकार बहुजन समाजाला नव्हता. स्त्रीयांना तर शिक्षण वर्ज्य होते. फक्त ब्राह्मण वर्ग शिक्षण घेत होता. त्यामुळे ब्राह्मणेतर वर्ग अज्ञानाच्या अंधकारात खितपत पडावे लागले होते. याला छेद देत ब्रिटीशांनी शिक्षणाचे सार्वत्रिकीकरण करण्याचा प्रयत्न केला. म. फुले यांनी १८४८ रोजी मुलींसाठी शाळा काढली. अस्पृश्यांसाठी शाळा उभारल्या. शेतकरी वर्गाला शिक्षणासाठी प्रेरणा दिली. म.फुले आणि सावित्रीबाई फुले यांनी सामाजिक परिवर्तनासाठी केलेले कार्य अतिशय महत्वाचे आहे.

प्रबोधन युगात समाजसुधारकांची नवी पिढी निर्माण झाली. पाश्चात्य ज्ञान, विज्ञान विचारांचा अंगीकार करून मानवतावादी चळवळीला सुरुवात केली. त्यांनी हिंदू समाजातील वाईट चालीरिती, परंपरा यांना नकार दिला. जातीभेद, विषमता, धार्मिक अवडंबरे यांना छेद देऊन सर्वांना समान वागणूक मिळावी यासाठी प्रयत्न केले. परंतु या समाजसुधारकांमध्ये दोन भेद होते. काही सुधारक फक्त बोलके होते. तर काही सुधारक हे कृतीशील होते. यामुळे प्रबोधन चळवळीला मर्यादा पडली. असे असले तरी समाजपरिवर्तनासाठी सर्वांनी केले प्रयत्न महत्वाचे आहेत. समाजसुधारणेचा ध्यास घेऊन या काळात विविध समाजांची स्थापना करण्यात आली. त्यामध्ये प्रार्थना समाज, ब्राह्मो समाज, सत्यशोधक समाज यांचे कार्य महत्वाचे आहे. ब्रिटीश राजवटीत भारतीय समाजात ख्रिश्चन धर्माचा प्रचार व प्रसार व्हायला सुरुवात झालेली होती. यातून धर्मांतराच्या घटना ही घडत होत्या. त्याबरोबरच पाश्चात्य ज्ञानाची ओळख होऊ लागल्यामुळे समाजसुधारणेचे प्रयत्न व्हायला लागले होते. याचा परिणाम म्हणजे हिंदू समाजव्यवस्थेची चिकित्सा व्हायला लागली होती. त्यातील वैगुण्ये लोकांना कळायला लागली होती. अशा स्थितीत समाजाला दिशा देण्यासाठी महाराष्ट्रात प्रार्थना समाजाने केलेले कार्य महत्वाचे आहे. महाराष्ट्रातील समाजसुधारकांच्या सामाजिक सुधारणेचा एक भाग म्हणून प्रार्थना समाजाची स्थापना झालेली होती. आत्माराम पांडुरंग तर्खडकर आणि दादोबा पांडुरंग तर्खडकर या बंधूंनी ३१ मार्च १८६७ रोजी मुंबईत या समाजाची स्थापना केली. 'सुबोध पत्रिका' हे या समाजाचे मुखपत्र होते. सुरुवातीच्या काळात प्रार्थना समाजाने ब्राह्मो समाजाच्या धरतीवर महाराष्ट्रात समाजसुधारणेसाठी प्रयत्न केले. महाराष्ट्रातील सामाजिक परिस्थिती लक्षात घेऊन महादेव गोविंद रानडे आणि रा.गो. भांडारकर यांनी प्रार्थना समाजाच्या तत्वांमध्ये बदल केला. शिक्षण हा मानवाचा तिसरा डोळा आहे. या रानडेच्या विचारांचा प्रभाव प्रार्थना समाजाच्या कार्यकर्त्यांवर पडून त्यांनी मुंबईत रात्रशाळा काढली. यामध्ये सर्व जातीतील मुलांना प्रवेश दिला. विशेषतः मुंबईतील कामगार, हमाल, श्रमिक वर्गातील मुलांनासाठी

पुढाकार घेतला. त्यांनी विद्यार्थ्यांसाठी कमवा आणि शिका ही योजनाही सुरु केली. अनाथ मुलांसाठी आधारगृहे स्थापन केली. १८७८ मध्ये पंढरपूर येथे अनाथ आश्रम स्थापन करून समाजातील उपेक्षित मुलांना आधार दिला. स्त्रीशिक्षणासाठी विशेष प्रयत्न केले. पंडिता रमाबाई यांनी आर्य महिला समाजाची सुरुवात केली. समाजातील अंधश्रद्धा, रुढी, परंपरा आणि देवभोळेपणापासून समाजाने दूर राहण्यासाठी त्यांनी केलेले प्रयत्न महत्वाचे आहेत.

म. फुले यांनी २४ सप्टेंबर १८७३ मध्ये सत्यशोधक समाजाची स्थापना केली. या समाजाने महाराष्ट्रातील सामाजिक, सांस्कृतिक व राजकीय जीवनाला नवे परिमाण प्राप्त करून दिले. विशेषतः शूद्रादिशूद्रस्त्रीवर्गाला जमीनदार, शेटजी आणि भटजी म्हणजेच पुरोहितांकडून होणाऱ्या अन्याय, अत्याचार व धार्मिक गुलामगिरीतून बाहेर काढण्यासाठी केलेले कार्य ऐतिहासिक स्वरूपाचे आहे. 'दीनबंधू' हे सामाहिक सत्यशोधक समाजाच्या वतीने चालविण्यात आले. या समाजाची ध्येयधोरणे स्वतः म. फुले यांनी सार्वजनिक सत्यधर्म या ग्रंथात मांडली. यामुळे या समाजाला वैचारिक व तात्विक अधिष्ठान प्राप्त झाले. 'सर्वसाक्षी जगत्पती, त्याला नको मध्यस्ती' हे समाजाचे ब्रीदवाक्य होते. या समाजाने सामाजिक गुलामगिरीविरुद्ध आवाज उठविला. पुरोहितशाहीला विरोध केला. समाजातील विषमतेवर प्रहार करून तिला नष्ट करणे आणि समाजात शिक्षणाचा प्रचार व प्रसार करणे ही महत्वाची कामे सत्यशोधक समाजाने केली हे अतिशय महत्वाचे आहे.

एकोणिसाव्या शतकात समाजसुधारकांकडून झालेले सामाजिक प्रबोधनाचे प्रयत्न दलित समाजाच्या उत्थानासाठी पुरक ठरले. ब्रिटीश सत्तेच्या माध्यमातून जुन्या रुढी, परंपराना नाकारून समाजात जी सामाजिक न्यायाची सुरुवात झाली होती. ती यासाठी पुरक ठरली. विशेषतः शिक्षणाचा अधिकार दलितांना मिळाल्यामुळे दलित समाजाच्या सामाजिक, सांस्कृतिक व राजकीय जीवनात अमूलाग्र बदल होऊ लागला. यासाठी म. फुले आणि सत्यशोधक परंपरेतील विचारवंत तसेच राजर्षी शाहू महाराज यांनी केलेले कार्य विशेष उल्लेखनीय आहे. मात्र डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या रूपाने दलित समाजाला एक क्रांतिनायक मिळाले. बाबासाहेबांनी दलितांना नवी अस्मिता मिळवून दिली. त्यांना निणार्यक स्थितीत आणून ठेवले. सामाजिक, सांस्कृतिक आणि राजकीय या सर्वच पातळ्यांवर दलित समाजाला नवे अस्तित्व बहाल केले. हजारो वर्षांपासून अस्पृश्यता, विषमता, गुलामगिरीत खितपत पडलेल्या दलित समुहांना स्वातंत्र्य मिळवून दिले. भारतीय संविधानाच्या माध्यमातून नवा सामाजिक जाहीरनामा उभा केला. बाबासाहेबांच्या या युगप्रवर्तक कार्याविषयी वरती विचार केलेलाच आहे. या आंबेडकरी ऊर्जेतूनच दलित साहित्याची चळवळ निर्माण झाली. तिला वैश्विक रूप प्राप्त झाले. त्यामुळे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आणि दलित साहित्य यातील अनुबंध सूर्यसत्यासारखा प्रकाशमान आहे.

---

## २.५ दलित साहित्याची पूर्वपरंपरा

---

दलित साहित्य या वाङ्मयीन प्रवाहाची निर्मिती ही अनेक वर्षांच्या संचितातून झालेली आहे. या संचितात दलित समुहांच्या उत्थानासाठी प्राचीन काळापासून झालेल्या विविध आंदोलने, सामाजिक चळवळी, वाङ्मयीन चळवळी यांचा समावेश होतो. दलितांचा सामाजिक- सांस्कृतिक इतिहास पाहिला तर हा समूह अत्यंत प्रामाणिक, स्वाभिमानी व

लढवय्या होता. त्याचे नाते एतदेशीय लोकांशी होते. परंतु पुढे आर्यांच्या आक्रमणानंतर या समुहांवर गुलामगिरी लादली. त्यांना बहिष्कृत केले. अस्पृश्य म्हणून त्यांना वंचित ठेवण्यात आले. याला धार्मिक रूप देऊन त्याला दलितत्वाचे जीवन जगण्यास भाग पाडले. परंतु या जीवनाविरुद्ध समतावादी चळवळीच्या माध्यमातून आवाज उठविला गेला. दलितांना त्यांच्या अस्तित्वाची जाणीव करून दिली. या अस्मितादर्शनातूनच पुढे दलित साहित्याची चळवळ उदयास आली. याची पूर्वपरंपरा अगदी बौद्ध काळापर्यंत सापडते. नंतर संतांची चळवळ, म. फुले यांचे विचारकार्य, सत्यशोधकी जलसे, आंबेडकरी जलसे आणि दलितांची वृत्तपत्रे अशा विविध पूर्वधारा यात समाविष्ट होतात.

### बौद्ध परंपरा :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी बौद्ध धर्माचा स्वीकार केला. ही भारतातील धम्म क्रांतीच होती. या निमित्ताने भारतीय इतिहासातील बौद्ध धर्मविषयक नवे ज्ञान व नवे भान निर्माण झाले. बाबासाहेबांनी धम्म दीक्षा समारंभात नागपूर येथील सभेमध्ये नागपूरचे बौद्ध धर्माशी आणि दलितांना नाग लोकांशी असलेला अनुबंध सांगितला होता. या अर्थाने दलित समुहांचा बौद्ध धर्माशी असलेला जुना सहसंबंध अधोरेखित झाला. भारताच्या इतिहासात बौद्ध परंपरा समृद्ध आहे. समाजाला नैतिक अधिष्ठान देण्यासाठी या धम्म चळवळीतून विशेष प्रयत्न झाले आहेत. विशेषतः धम्म हा समतावादी जीवनमार्ग आहे. बुध्दाने आपल्या संघात सर्व जाती धर्माच्या लोकांचा समावेश केला. कारण बुध्दाचा धम्म हा सर्वांसाठी होता. बुध्दाने आपल्या संघात स्त्रीयांना संधी दिली. ही घटना क्रांतिकारक होती. वैदिक धर्मात स्त्रीला गौन स्थान दिले होते. तिला शूद्रादिशूद्रापेक्षा खालच्या स्थानी ठेवले. बौद्धांनी या सर्व वैदिक परंपरेला नकार दिला. ही विचारधारा दलित साहित्याच्या निर्मितीसाठी पुरक ठरली. आंबेडकरी विचारऊर्जेतून बौद्ध परंपरा दलित साहित्याच्या पूर्वपरंपरेत महत्त्वाची ठरलेली आहे.

### संत परंपरा :

महाराष्ट्राला संतांची भूमी म्हटले जाते. मध्ययुगीन कालखंडामध्ये महाराष्ट्रात विविध संत संप्रदाय निर्माण झाले. महानुभाव, वारकरी सांप्रदायांचा यामध्ये समावेश होतो. यामधील वारकरी संप्रदायात दलित संतांनी मोठ्या प्रमाणात साहित्यनिर्मिती केली. त्यामध्ये संत चोखामेळा आणि त्यांचा परिवार यांचे लेखन अतिशय महत्त्वाचे आहे. संत चोखामेळा हे जन्माने अस्पृश्य असून वारकरी सांप्रदायातील एक संतकवी होते. इतर वारकरी संतांप्रमाणेच त्यांचीही ईश्वर भक्ती यावर श्रद्धा होती. त्यांच्या अभंगातील पारंपरिक जातीव्यवस्थेविषयी परखड विचार आलेले नसले तरी त्यातून जातजाणीव अस्पष्टपणे अभिव्यक्त झालेली आहे. उदा. 'हीन याती माझी देवा, कैसे घडे तुझी सेवा' अशी भावना त्यांनी आपल्या अभंगात मांडली. चोखामेळा यांनी आपल्या अभंगातून आपल्या मनातील सामाजिक विषमतेविषयीची कणव अभिव्यक्त केलेली आहे. मनुष्याला मिळालेला जन्म त्याच्या पूर्वसंचितानुसार लाभतो या पारंपरिक संस्कारातून त्यांचे मन घडलेले होते. तरीसुद्धा मज दूर दूर हो म्हणती अशी भावना त्यांनी व्यक्त केलेली आहे. कधी कधी ते सामाजिक विषमतेची परखड चिकित्सा करत असल्याचेही दिसते. 'पापांचा घडा भरेल त्यांचा, नरक यातना सहतील ते, ते माणूस नाही दैत्यांची अवलाद, त्याचे त्यांना भोगू दे'

अशी तीव्र चीड ते व्यक्त करतात. संत चोखामेळा यांच्या मनातील भावना अस्पष्टपणे त्यांनी मांडल्या असल्या तरी त्यांच्या परिवारातील त्यांची पत्नी संत सोयराबाई, मुलगा संत कर्ममेळा, बहिण संत निर्मळा, मेहुणे संत बंका यांनी ही आपल्या अभंगातून परखड मांडणी केलेली आहे. विशेषतः संत कर्ममेळा यांनी अतिशय परखडपणे सामाजिक रुढी, परंपराविषयी मांडणी केलेली आहे. 'आमुची केली हीन यादी, तुज का न कळे श्रीपती, जन्म गेला उष्टे खाता, लाज न ये तुमच्या चित्ता' अशा प्रश्नरूपी तक्रारीतून दलितांचे जगणे समाजासमोर मांडले. संत कर्ममेळाचे अभंग हे दलित साहित्यातील विद्रोहाचे आद्यरूप आहे.

### म. फुले यांचा वारसा :

भारताच्या इतिहासात एकोणिसाव्या शतकामध्ये जोतीराव फुले हे क्रांतिकारक महापुरुष होऊन गेले. त्यांनी आपल्या विचारकार्यातून समाजातील शूद्रादिशूद्रस्त्री वर्गाच्या उत्थानाची पायाभरणी केली. म. फुले हे कर्ते सुधारक होते. त्यांनी आपला विचार प्रत्यक्ष कृतीतून दाखविला. त्यांना माहीत होते की, दलित समाजाला जर या गुलामगिरीतून बाहेर काढायचे असले तर शिक्षण देणे खूप गरजेचे आहे. यासाठी त्यांनी शाळा काढल्या. पत्नी सावित्रीबाईंना शिकविले. मुलींच्या शाळा, दलितांसाठी शाळा स्थापन करू शिक्षणाचा विचार त्यांच्यापर्यंत पोहचविला. आपल्या प्रत्येक ग्रंथातून प्रस्थापित समाजाकडून होणाऱ्या शोषणाचे रूप उजागर केले. 'तृतीय रत्न, गुलामगिरी, शेतकऱ्यांचा असूड, ब्राह्मणांचे कसब, सार्वजनिक सत्यधर्म' हे ग्रंथ यामध्ये अतिशय महत्त्वाचे आहेत. म. फुले यांच्या विचारकार्यातूनच दलितांमध्ये परिवर्तन होऊ लागले. त्यांच्यामध्ये समाजजागृती निर्माण झाली. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी ही म. फुले यांना आपले गुरु मानले होते. या याअर्थाने दलित साहित्याच्या चळवळीची बिजे म. फुले यांच्या विचारवारशात आहेत. हे आपल्या लक्षात येते.

### सत्यशोधक शाहिरी :

दलित साहित्याच्या पूर्वरूपात शाहिरी वाङ्मयाचा अतिशय महत्त्वाचा वाटा आहे. म. फुले यांनी मांडलेल्या विचारांना शाहिरींनी तळागळातील समाजपर्यंत पोहचविला. समाजाचे प्रबोधन केले. यातूनच सत्यशोधक शाहिरी निर्माण झाली. म. फुले यांच्या सत्यशोधकी विचारांनी शाहिरी वाङ्मयाच्या आकृतिबंधात आमूलाग्र बदल झाला. याविषयी डॉ. कृष्णा किरवले लिहितात, सामाजिक स्वातंत्र्याच्या पायाभरणीसाठी हिंदुंच्या विषमताधिष्ठित चातुर्वर्ण्यावर म. फुले यांनी घाणाघाती वार केले. मानवाचे धर्म नसावे अनेक किंवा देश धर्म भेद नसावा अंतरी हा मूलगामी विचार घेऊनच फुले यांची शाहिरी अथवा अखंडांची रचना अवतीर्ण झाली. या रचनेचा प्रभाव काही दलित रचनाकारांवर पडला. सत्यशोधकी शाहिरीत जलसा रचना प्रकारातून मूलभूत लेखन झाले आहे. सत्यशोधक तमाशाची सुरुवात १९०० व्या दरम्यान भीमराव विठ्ठलराव महामुनी यांनी प्रथम केली. त्यांनी मुंबई प्रांतात सत्यशोधक जलसे सुरू केले. यातून लोकजागृती झाली. १८९१ ते १९१० हा सत्यशोधक चळवळीचा दुसरा कालखंड आहे. त्याचे नेतृत्व कृष्णराव भालेकर, मुकुंदराव पाटील, भीमराव महामुनी यांच्याकडे होते. या काळात जलशांना महत्त्वाचे स्थान होते. त्यामुळे भीमराव महामुनी हे जलशाचे पहिले प्रवर्तक होते. (दलित

चळवळ आणि साहित्य, पृ. ७६) या सर्व सत्यशोधक जलसाकारांनी समाजप्रबोधनाचा विचार मांडला. ब्राह्मणी धर्माने समाजावर लादलेली गुलामगिरी उजागर केली. धर्मसत्तेचे असलेले अवडंबर नाहीसे करण्याचा प्रयत्न केला. यातून सामाजिक जीवनात नवा बदल दिसू लागला. विशेषतः दलित वर्गात नवे भान येऊ लागले. आपणही माणूस आहोत. आपल्यालाही हक्क व अधिकार आहेत. अशी जाणीव त्यांच्यात निर्माण झाली. सत्यशोधक जलशांनी केलेले कार्यच पुढे आंबेडकरी जलसाकारांनी गतिमान केले. यातून खऱ्या अर्थाने दलित समाजाच्या उत्थानाला गती मिळाली.

### आंबेडकरी जलसे :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या उदयाने दलित समाजामध्ये क्रांतिकारक बदल झाला. त्यांच्यापासूनच दलित समुहाने सामाजिक परिवर्तनाची चळवळ गतिमान केली. तिला निर्णायक रूप दिले. यासाठी दलित शाहिरींनी जलशांच्या माध्यमातून बाबासाहेबांचा विचार जनसामान्यांपर्यंत पोहचविले. यातूनच आंबेडकरी जलसे लोकप्रिय झाले. आंबेडकरी जलशांचे स्वरूप बंडखोर होते. हिंदू धर्मातील रुढी परंपरा, चालीरिती यातून दलितांना भोगाव्या लागणा-या यातनांचा आविष्कार झालेला आहे. विशेषतः शाहिरी रचनांच्या बांधणीला आंबेडकरी जलसाकारांनी छेद दिला. आणि नव्या थाटामध्ये ती आविष्कृत झाली. याविषयी डॉ. कृष्णा किरवले यांनी मार्मिक भाष्य केलेले आहे. ते लिहितात, सामाजिक परिवर्तनाचे एक माध्यम म्हणून सत्यशोधक व आंबेडकरी जलशांचे कार्य फार मोलाचे आहे. आंबेडकरी जलसा भीमराव करडकांनी सुरू केला असे म्हटले जाते. परंतु त्या अगोदरच भाऊ फक्कड यांनी आपल्या तमाशात गण, गौळण, बतावणी आणि वग याला आंबेडकरी विचारांचे अधिष्ठान दिले होते. भाऊ फक्कड यांच्या तमाशाचा भरभराटीचा कालखंड १९२० ते १९३० असा होता. भीमराव करडक व इतर आंबेडकरी जलसे नाशिक मंदिर प्रवेश सत्याग्रहानंतर उदयास आलेले आहेत. आंबेडकरी जलशातील नमन गीताने आणखीनच परिवर्तन आणले. हजारो वर्षांच्या दास्यातून मुक्त करणा-या महामानवांना त्यांनी नमन केले. डॉ. आंबेडकरांना आमच्या कुलदेवतांना, महात्मा जोतीबा फुल्यांना, छत्रपती शाहू महाराजांना अशा प्रकारच्या रचना करून धर्माधिष्ठित समाजव्यवस्थेला नवीन जीवनमूल्यांची ओळख करून दिली. (दलित चळवळ आणि साहित्य, पृ.७६-७७) अशाप्रकारे आंबेडकरी जलशांनी तत्कालीन सामाजिक, राजकीय जीवनावर भाष्य करणा-या रचना निर्माण केल्या. बाबासाहेबांचा विचार तळागळातील समुहांपर्यंत पोहचविला. त्यामुळे एक जलसा म्हणजे माझी दहा भाषणे आहेत. असे उद्गार स्वतः बाबासाहेबांनी काढले होते. यातून आंबेडकरी जलशांचे महत्त्व आणि दलितांच्या चळवळीतील त्यांचे योगदान स्पष्ट होते. जे क्रांतिकारक स्वरूपाचे आहे.

### दलितांची वृत्तपत्रे :

दलित साहित्याच्या चळवळीला खऱ्या अर्थाने बळ देण्याचे कार्य वृत्तपत्रे, मासिकांनी केलेले आहे. विशेषतः म. फुले यांनी प्रबोधनाच्या चळवळीला निर्णायक दिशा दिली. १९७७ मध्ये सत्यशोधक समाजाच्या वतीने 'दीनबंधु' हे बहुजन समाजाचे पहिले वृत्तपत्र काढण्यात आले. यातून सामाजिक विषमता, धर्माची गुलामगिरी, शेतकरी, दलित समुहांचे प्रश्न मांडले. पुढे १९८८ मध्ये गोपाळबाबा वलंगकर यांचे विटाळविध्वंसक आणि किसन फागूजी बनसोडे

यांनी मराठा दीनबंधु आणि चोखामेळा ही वृत्तपत्रे दलितांच्या प्रश्नांना खऱ्या अर्थाने वाचा फोडली.

दलितांच्या वृत्तपत्रीय इतिहासात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या वृत्तपत्रांचे योगदान अतिशय महत्वाचे आहे. डॉ. गंगाधर पानतावणे यांनी पत्रकार डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर या महत्त्वपूर्ण संशोधनाच्या माध्यमातून या योगदानला सर्वप्रथम उजागर केले. बाबासाहेबांनी १९२० मध्ये 'मूकनायक' हे पहिले वृत्तपत्र काढले. हे शीर्षक उद्बोधक असून हजारो वर्षांचा दलितांचा कोंडलेला आवाज पहिल्यांदा मूकनायकमधून बोलता झाला. यामधून बाबासाहेबांनी आपल्या सामाजिक व राजकीय विचारांची मांडणी केली. पुढे १९२७ मध्ये त्यांनी 'बहिष्कृत भारत' हे वृत्तपत्र काढले. भारतीय समाजात दलितांना सातत्याने अस्पृश्य ठरवून बहिष्कृत केले होते. या बहिष्कृतांचा बुलंद आवाज या वृत्तपत्रातून आविष्कृत झाला. डॉ. आंबेडकरांनी पुढे 'जनता', 'समता' आणि 'बहिष्कृत भारत' या वृत्तपत्रांची निर्मिती केली. १९२० ते १९५६ या काळातील दलितांच्या सामाजिक – सांस्कृतिक घडामोडींचा ऐतिहासिक दस्तऐवज म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या वृत्तपत्रांना महत्वाचे स्थान आहे.

दलित चळवळ आणि साहित्याचे मुखपत्र म्हणून 'अस्मितादर्श' या नियतकालिकांचे योगदान अतिशय महत्वाचे आहे. डॉ. गंगाधर पानतावणे यांनी १९६८ मध्ये औरंगाबाद येथून अस्मितादर्श सुरू केले. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या पदस्पर्शाने पावन झालेल्या औरंगाबाद येथील मिलिंद महाविद्यालयातून अस्मितादर्शची पायाभरणी झाली. तेथे 'अस्मिता' हे अनियतकालिक विद्यार्थ्यांसाठी चालू करण्यात आले. परंतु पुढे ते बंद पडले. आंबेडकरवादाची ऊर्जा भावी पिढ्यांमध्ये जागृत ठेवण्यासाठी आणि दलित लेखकांना हक्काचे विचारपीठ मिळवून देण्यासाठी डॉ. पानतावणे यांनी अस्मितादर्श ची मांडणी केली. आंबेडकरवाद आणि अस्मितादर्श यातील अनुबंध मांडताना डॉ. पानतावणे यांनी लिहिलेले आहे की, अस्मितादर्श हे आंबेडकरवादाचे अपत्य आहे. आंबेडकर विचार रुजविणे, आंबेडकर विचारांची मशागत करणे आणि आंबेडकरी विचारला विकृत करू पाहणाऱ्या प्रवृत्ती खणून काढणे हीच अस्मितादर्श ची परिक्रमा आहे. आंबेडकरवाद हीच अस्मितादर्शची प्रतिज्ञा आणि जीवनदृष्टी आहे. (दलित साहित्य : चर्चा आणि चिंतन, पृ. ६) अस्मितादर्श गेल्या पन्नास वर्षांमध्ये दलित साहित्याला बळ दिले. याच्या अभिव्यक्तीसाठीच स्वतंत्रपणे वाटचाल केली. अनेक अंक, विशेषांक, संमेलनांचे आयोजन करून महाराष्ट्रातच नव्हे तर भारतभर आंबेडकरवादी विचारवंतांच्या पिढ्या घडविल्या. अस्मितादर्शचे हे कार्य ऐतिहासिक असून आजही ते अविरतपणे चालू आहे. अस्मितादर्शच्या वाटेनेच 'लोकानुकम्पा', 'सिंहगर्जना', 'समुचित', 'दलित व्हाईस' या नियतकालिकांनी दिलेले योगदान महत्वाचे आहे. यातूनच दलित साहित्याची चळवळ गतिमान झाली.

---

## २.६ समारोप :

---

दलित साहित्य हा आंबेडकरी अस्मितेचा वाङ्मयीन आविष्कार आहे. या प्रवाहची निर्मिती चळवळीतून झाली. दलित समाजाच्या उत्थानासाठी इतिहासात मोठा संघर्ष करावा लागला. हजारो वर्षांची जातीय मानसिकता मोडून टाकणे सहजासहजी शक्य झाले नाही. तरीसुद्धा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या वैचारिक अधिष्ठानावर दलितांच्या चळवळीला निर्णायक रूप प्राप्त झाले. दलितांमध्ये सामाजिक, सांस्कृतिक, राजकीय, आर्थिक जागृती

झाली. तो लिहू लागला. बोलू लागला. यातून दलित साहित्याचा आविष्कार घडला. ज्याने प्रस्थापित साहित्यव्यहाराला छेद दिला. नवे स्वतंत्र विश्व निर्माण केले. केवळ मराठीच नाही तर विविध भारतीय भाषा आणि जागतिक साहित्यामध्येही दलित साहित्याची चर्चा झाली. त्याचे अस्तित्व मान्य केले गेले. आज वैश्विक साहित्यात मराठी भाषेची जी ओळख निर्माण झाली आहे. त्यामध्ये दलित साहित्याचे योगदान अतिशय महत्त्वाचे आहे.

## २.७ संदर्भ ग्रंथ सूची

१. इंगळे, रामचंद्र : महारांचा सांस्कृतिक इतिहास, अभिजित प्रकाशन, नागपूर, १९८७.
२. कुलकर्णी, गो.म. : दलित साहित्य : प्रवाह आणि प्रतिक्रिया, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, १९८६.
३. किरवले, कृष्णा : दलित चळवळ आणि साहित्य, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, १९९६.
४. किरवले, कृष्णा : आंबेडकरी शाहिरी : एक शोध, नालंदा प्रकाशन, पुणे, १९९२.
५. खरात, शंकरराव : दलित वाङ्मय प्रेरणा व प्रवृत्ती, इनामदार बंधु प्रकाशन, पुणे, १९७१.
६. गारे, गोविंद : महाराष्ट्रातील दलित : शोध आणि बोध, सहाध्ययन प्रकाशन, मुंबई, १९७३.
७. जाधव, रा.ग. : निळी पहाट, प्राज्ञ पाठशाळा मंडळ, वाई, १९८२.
८. डांगळे, अर्जून : दलित साहित्य : एक अभ्यास, म.रा.सा.स.मंडळ, मुंबई, १९७८.
९. पानतावणे, गंगाधर : पत्रकार डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, १९८७.
१०. पानतावणे, गंगाधर : दलित वैचारिक वाङ्मय, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई, १९९५.
११. पानतावणे, गंगाधर : दलित साहित्य : चर्चा व चिंतन, साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद, १९९३.
१२. पानतावणे, गंगाधर : वादळाचे वंशज, प्रचार प्रकाशन, कोल्हापूर,
१३. फडके, भालचंद्र : दलित साहित्य : वेदना आणि विद्रोह, श्रीविद्या प्रकाशन, पुणे, १९७७.
१४. बागूल, बाबुराव : दलित साहित्य : आजचे क्रांतिविज्ञान, बुध्दिस्ट पब्लिशिंग हाऊस, नागपूर.
१५. मनोहर, यशवंत : दलित साहित्य : सिध्दांत आणि स्वरूप, प्रबोध प्रकाशन, नागपूर, १९७८.
१६. मुरंजन, सुमंत : पुरोहित वर्गवर्चस्व व भारताचा सामाजिक इतिहास, प्राज्ञ पाठशाळा मंडळ, वाई, १९७३.
१७. मेश्राम, योगेंद्र : दलित साहित्य : उद्गम आणि विकास, श्री मंगेश प्रकाशन, नागपूर, २०११.
१८. वाघमारे, जनार्दन : समाजपरिवर्तनाच्या दिशा, साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद, १९९५.
१९. सरदेसाई, एस. जी. : भारतीय तत्त्वज्ञान : वैचारिक आणि सामाजिक संघर्ष, लोकवाङ्मय गृह प्रकाशन, मुंबई, १९८७.

२०. सुमंत, यशवंत व पुंडे, दत्तात्रय :महाराष्ट्रातील जातिसंस्थाविषयक विचार, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे १९८८.
२१. क्षीरसागर, रा.का. : भारतीय रिपब्लिकन पक्ष, कैलाश पब्लिकेशन्स, औरंगाबाद, १९७९.

दलित साहित्याच्या  
चळवळीची पार्श्वभूमी

---

## २.८ पुरक वाचन

---

१. म. जोतीराव फुले : गुलामगिरी
२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : शूद्र पूर्वी कोण होते ?
३. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : अस्पृश्य मूळचे कोण आणि ते अस्पृश्य कसे बनले ?
४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : क्रांती आणि प्रतिक्रांती
५. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर : जातीसंस्थेचे निर्मूलन

---

## २.९ स्वाध्याय

---

### अ. दीघोत्तरी प्रश्न

१. दलित साहित्य चळवळीमागील सामाजिक वास्तव स्पष्ट करा.
२. आंबेडकरपूर्व चळवळीचे योगदान विशद करा.
३. आंबेडकरी चळवळीचे क्रांतिपर्व विशद करा.
४. दलित साहित्य चळवळीचे सांस्कृतिक महत्त्व स्पष्ट करा.
५. दलित साहित्याची पूर्वपरंपरेचे स्वरूप विशद करा.

### ब. टिपा लिहा

१. मराठवाडा विद्यापीठ नामांतर लढा.
२. रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया.
३. शिवराम जानबा कांबळे.

### क. एका वाक्यात उत्तरे लिहा

१. दलित पॅंथरची स्थापना कधी करण्यात आली?
२. 'पुणे करार' कोणत्या दोन नेत्यांमध्ये झाला?
३. संत चोखामेळा कोणत्या सांप्रदायातील संतकवी होते ?

\*\*\*\*\*

## सुरुंग (काव्यसंग्रह) व सूर्यस्तूप (कथासंग्रह)

### घटक रचना

- ३.१ उद्दिष्टे -
- ३.२ प्रास्ताविक -
- ३.३ विषय विवेचन - 'सुरुंग' (काव्यसंग्रह) - त्र्यंबक सपकाळे
  - ३.३.१. दलित कवितेतील त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता
  - ३.३.२. 'सुरुंग' या काव्यसंग्रहाविषयी
  - ३.३.३. 'सुरुंग' मधील कविता - स्वरूपविशेष
  - ३.३.४. 'सुरुंग' मधील कवितांची आशयसूत्रे
  - ३.३.५. 'सुरुंग' मधील कवितेतील वेदना आणि विद्रोह
  - ३.३.६. 'सुरुंग' मधील कवितेतील प्रतिमा व भाषाशैली
- ३.४ विषय विवेचन - 'सूर्यस्तूप' (कथासंग्रह) - प्रा. आत्माराम गोडबोले
  - ३.४.१. 'सूर्यस्तूप' या कथासंग्रहाविषयी
  - ३.४.२. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांचे - आकलन व विश्लेषण
  - ३.४.३. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांची आशयसूत्रे
  - ३.४.४. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांचे स्वरूप - विशेष
  - ३.४.५. 'सूर्यस्तूप' कथांमधील पात्रचित्रण, निवेदन व भाषाशैली
- ३.५. सारांश
- ३.६. सरावासाठी स्वाध्याय / नमुना प्रश्न
- ३.७. पूरक अध्ययन/ अधिक वाचनासाठी पुस्तके

### ३.१. उद्दिष्टे :

या घटकाचे अध्ययन केल्यानंतर आपल्याला -

- दलित कवितेचे व कथेचे स्वरूप समजावून घेता येईल.
- कवी त्र्यंबक सपकाळे यांचे काव्यलेखनातील आणि कथाकार प्रा.आत्माराम गोडबोले यांचे कथालेखनातील योगदान जाणून घेता येईल.
- 'सुरुंग' मधील कवितांची व 'सूर्यस्तूप' मधील कथांची आशयसूत्रे स्पष्ट करता येतील.
- 'सुरुंग' मधील कविता व 'सूर्यस्तूप' मधील कथांचे स्वरूप- विशेष, जीवनजाणिवा व मूल्यविचार स्पष्ट करता येतील.
- 'सुरुंग' मधील कविता व 'सूर्यस्तूप' मधील कथांमधून व्यक्त झालेले जीवनदर्शन, समाजवास्तव अनुभवविश्वाचे वेगळेपण जाणून घेता येईल.
- 'सुरुंग' व 'सूर्यस्तूप' या साहित्यकृतीतील शैली विशेष व भाषिक सौंदर्य स्पष्ट करता येईल.

मराठी साहित्य परंपरेत १९६० नंतरच्या काळात दलित साहित्याची एक वाङ्मयीन, सामाजिक व सांस्कृतिक चळवळ सुरू झाली. या चळवळीतून निर्माण झालेल्या दलित साहित्याने मराठी साहित्यात मोलाची भर घातलेली आहे. घटक क्रमांक एक व दोन मध्ये आपण दलित साहित्याची वाङ्मयीन व सामाजिक- सांस्कृतिक पार्श्वभूमी समजून घेतली. दलित साहित्याची संकल्पना व स्वरूप समजावून घेतानाच या जाणिवेने निर्माण झालेले साहित्य प्रातिनिधिक स्वरूपात अभ्यासताना एक कविता संग्रह व एक कथासंग्रह अभ्यासक्रमात समाविष्ट केलेला आहे. दलित कविता, व दलित कथेचे स्वरूप व वेगळेपण लक्षात घेताना अनुक्रमे त्र्यंबक सपकाळे यांचा 'सुरुंग' हा काव्यसंग्रह व आत्माराम गोडबोले यांचा 'सूर्यस्तूप' हा कथासंग्रह येथे अभ्यासायचा आहे.

---

### ३.३. विषय विवेचन - 'सुरुंग' (काव्यसंग्रह) -

---

**दलित कविता :** दलित साहित्य हा आधुनिक मराठीतील एक महत्वाचा साहित्यप्रवाह होय. सामाजिक व वाङ्मयीन अशा दुहेरी विचारमंथनातून स्वातंत्र्योत्तर काळात 'दलित साहित्य' ही संज्ञा/संकल्पना पुढे आली. विशेषत्वाने इ.स. १९६० नंतर ती चर्चेचा व अभ्यासाचा विषय ठरली. दलित साहित्यात वास्तव जीवनाचे नेमके चित्रण फार मोठ्या प्रमाणातून प्रकट होण्याचा काळ म्हणजे १९६० नंतरचे लेखन आहे. या साहित्यप्रवाहात जे लेखन झाले ते केवळ शब्द व भाषा सौंदर्यात न अडकता त्यातून स्वानुभवाच्या खोलीने समकालीन समाज वास्तव मांडण्याचा प्रयत्न झाला. शंकरराव खरात, हरिभाऊ पगारे, बाबुराव बागूल, सुखराम हिवराळे, केशव मेश्राम, वामन होवाळ, नामदेव ढसाळ, राजा ढाले, हिरा बनसोडे, भीमराव शिरवाळे, योगीराज वाघमारे, त्र्यंबक सपकाळे, दया पवार, वामन निंबाळकर, माधव कोंडविलकर, अरुण कांबळे, अर्जुन डांगळे असे मान्यवर लेखक-कवी या काळात आपल्या लेखन गुणवैशिष्ट्याने पुढे आले.

विसाव्या शतकातील मराठी कवितेत दलित कवितेने स्वतःचे स्थान समर्थपणे आणि स्पष्टपणे अधोरेखित केले. दलित जाणिवेची कविता वेदना, आत्मशोध, नकार आणि विद्रोह या संवेदना व्यक्त करते. अन्यायाची चिकित्सा आणि न्यायाची मागणी हा दलित कवितेचा गाभा आहे. त्यासाठी विषमतेला नकार देण्याची भाषा दलित कविता करते. **दलित कवितेच्या केंद्रस्थानी माणूस आहे.** येथील अमानुष व्यवस्थेने माणसाचे माणूसपण कसे हिरावून घेतले. अज्ञान, दारिद्र्य व परिस्थितीमुळे अन्याय-अत्याचार शतकोनुशतके सहन केला. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी दिलेल्या विचार व प्रेरणेतून अन्याय -अत्याचाराला विरोध करीत स्वतःचा नवा मार्ग शोधण्याचा प्रयत्न ही कविता करते. विद्रोह हा दलित कवितेतील महत्वाचा घटक होय. ह्या विद्रोहातून सनदशीर मार्गाने आपला न्याय हक्क व माणूसपणाचे जगणे शोधण्याचा प्रयत्न कवी आपल्या काव्यातून करतो.

#### ३.३.१. दलित कवितेतील त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता -

दलित साहित्य प्रवाहातील खान्देशचे विद्रोही कवी त्र्यंबक सपकाळे यांनी आपल्या काव्यलेखनाने वेगळेपण टिकवून ठेवले. २२ एप्रिल १९३० रोजी जळगाव जिल्ह्यातील आव्हाणे येथे जन्मलेल्या कवी त्र्यंबक सपकाळे यांचे प्राथमिक शिक्षण आव्हाणे व मॅट्रीक

पर्यंतचे शिक्षण जळगाव येथील विद्यानिकेतन विद्यालयात झाले. भारतीय रेल्वेत तिकीट संग्राहकची (तिकीट कलेक्टर) नोकरी सांभाळत हजारो लोकांशी संपर्कात येऊन त्यांच्या दुःख भावना त्र्यंबक सपकाळे यांनी आपल्या कवितेतून मांडल्या. त्र्यंबक सपकाळे यांची 'सुरुंग' मधील कविता सामाजिक विषमतेचा आविष्कार करते. बुरसटलेल्या विचारांवर ते आपल्या काव्यलेखनातून प्रहार करतात. धर्म, जात, विषमता, भेदभाव यामुळे माणसामाणसांमध्ये दरी कशी निर्माण होते आणि पशुपक्ष्यांपेक्षाही माणसांना मिळणारी वागणूक त्यांचा जीवनसंघर्ष या कवितेतून मांडला गेला आहे.

अस्पृश्य म्हणून सहन करावे लागलेले चटके त्यांच्या बालमनावर कोरले गेले. यातून त्यांची कविता 'सुरुंग' होऊन व्यवस्थेला सामोरी जाणारी व विद्रोह करणारी, सत्य सांगणारी, शोषण व्यवस्थेला खिंडार पाडणारी ठरली. नकार - विद्रोहाची पूर्वनिश्चित भूमिका स्वीकारून वेदनापूर्ण जीवनानुभव, विचारप्रधान दृष्टिकोणातून दलित कवितेने मांडला आहे. त्यामुळे जीवनानुभवाचे विविध पदर उकलून दाखविण्यापेक्षा पूर्वनिश्चित प्रतिक्रिया प्रकट करणे दलित कविता अधिक पसंत करते. साहजिकच दलित कवींना ती समाजपरिवर्तनाचे शस्त्र, दलितांसाठी चाललेल्या लढ्यांचे प्रभावी साधन वाटते. विध्वंस, निर्मिती आणि रचना अशी तिची प्रक्रिया आहे. आत्मनिष्ठा व समूहनिष्ठा यांच्या संघर्षाचे ते विद्रोही रूप ठरते. परंपरागत मराठी कवितेपेक्षा स्वाभाविकच दलित कविता वेगळी दिसते.

“ त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता ही अस्सल आंबेडकरी तत्त्वज्ञानाची स्वयंप्रकाशित कविता आहे” असा गौरव डॉ.गंगाधर पानतावणे यांनी केला आहे तर 'सुरुंग' आणि 'ब्रोकनमेन' हे कवितासंग्रह दीपस्तंभ आहेत, असे ज्येष्ठ साहित्यिक प्रा. केशव मेश्राम म्हणतात. ('सुरुंग'- मधील मनोगत) डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या विचार व कार्यातून प्रेरणा घेऊन आत्मभान विकसित करीत नकार, विद्रोह व संघर्ष परखडपणे मांडण्याचा प्रयत्न ज्या दलित प्रवाहातील कवींनी केला त्यातील एक महत्त्वाचे नाव म्हणजे त्र्यंबक सपकाळे हे होय.

### ३.३.२. 'सुरुंग' या काव्यसंग्रहाविषयी -

'सुरुंग' हा कवी त्र्यंबक सपकाळे यांच्या ३३ कवितांचा संग्रह 'अस्मितादर्श प्रकाशन'ने १९७६ प्रकाशित केला. दलित साहित्याच्या चळवळीला खऱ्या अर्थाने दिशा देणाऱ्या 'अस्मितादर्श'ने हा काव्यसंग्रह प्रकाशित केलेला असल्याने साहजिकच दलित साहित्यातील वेदना, विद्रोह, संघर्ष, नकार, अन्याय-अत्याचाराला विरोध या जाणिवा आपसूकच या कवितांमधून व्यक्त झालेल्या दिसतात. १९६७ ला 'अस्मितादर्श' अंकात त्र्यंबक सपकाळे यांची 'माणूस' ही पहिली कविता छापली गेली. १९९२ मध्ये १८ व्या अस्मितादर्श साहित्य संमेलनाचे (जालना) त्यांनी अध्यक्षस्थान भूषविले. २००१ मध्ये 'ब्रोकनमेन' हा कवितासंग्रह प्रकाशित झाला.

'अस्मितादर्श'च्या माध्यमातून डॉ.गंगाधर पानतावणे यांनी अनेक कवी - लेखकांना लिहीते केले. प्रेरणा व प्रोत्साहन दिले. 'सुरुंग' च्या प्रस्तावनेत आपले मनोगत व्यक्त करताना त्र्यंबक सपकाळे म्हणतात, “ मराठीतील बरेच साहित्य वाचले, पण रमलेच नाही. झपाटलो नाही. माझ्या वेदनेचा सूर मला कुठे गवसलाच नाही. मी लहानपणी जे अनुभवले, माझ्या बांधवांनी जे भोगले ते अजून माझे वय वाढले तरी तसेच आहे. जिवंत माणसांचे दुःख पाहताना हातातील ग्रंथ गळून पडतात. अन्याय, बलात्कार, बहिष्कार, नरबळी, अस्पृश्यता

यांनी भरलेले वर्तमानपत्रातले रकाने वाचून बेचैन होतो. स्वातंत्र्याचे पाव शतक लोटले, तरी मी तिथेच आहे...मी तिथेच राहणार का ?” असा मार्मिक प्रश्न कवी उपस्थित करतात. हीच त्यांच्या काव्यलेखनाची प्रेरणा आहे.

त्यांच्या काही कवितांचा जर्मन, उर्दू भाषेत अनुवाद झाला. तसेच महाराष्ट्र शासनाचा कवी केशवसुत पुरस्कार त्यांना मिळाला. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विद्यापीठ तसेच इंदोर विद्यापिठात ‘सुरंग’ हा काव्यसंग्रह अभ्यासक्रमात घेण्यात आला. तसेच काव्यसंग्रहातील काही निवडक कविता जपान, इंडोनेशिया आणि कवयित्री बहिणाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र विद्यापीठाच्या अभ्यासक्रमात समाविष्ट करण्यात आल्या आहेत.

सर्वसामान्यांचे अन्याय-अत्याचार सहन करीत जगणे आणि दुःख हा ‘सुरंग’ मधील या बहुतांशी कवितांचा विषय आहे. समाजमनाच्या सुख-दुःखाशी समरस होत विलक्षण अशी संवेदनशीलता या कवितेतून व्यक्त होते. त्यांचे जीवनानुभव विचार काव्यरूपात विलक्षणरित्या मानवी अस्तित्वाची जाणीव करून देतात. उपेक्षितांचे दुःख, वेदना, जीवन संघर्ष त्र्यंबक सपकाळे आपल्या कवितेतून अतिशय समर्थपणे मांडतात. त्यांच्या कवितांना अनुभवाचा, समाजमनाचा, समकालीन वास्तवाचा संदर्भ आहे. ‘सुरंग’ कवितासंग्रहाचा विविध भारतीय भाषांमध्ये अनुवाद झाला आहे. ‘लोकशाहीचा फुलोरा’, ‘वर्तुळाचा परीघ’, ‘सूर्य’, ‘या झुंडशाहीत’, ‘मला देश विकायचा आहे’, ‘क्रांतीदूत कावळे’, ‘ओयासिस’ या कविता वैशिष्ट्यपूर्ण आहेत. त्र्यंबक सपकाळे यांचा ‘सुरंग’ हा काव्यसंग्रह क्रांतीचे तत्वज्ञान मांडणारा आहे हे शीर्षकावरूनच आपल्या लक्षात येते. त्यांना क्रांतीतून मानवतेची उन्नती साधायची आहे.

### ३.३.३. ‘सुरंग’ मधील कविता - स्वरूपविशेष -

दलित जाणीव व्यथा-वेदना संघर्ष मांडतानाच उज्ज्वल भविष्याचा आशावादही त्यांच्या कवितेतून व्यक्त होतो. त्यामुळे त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता केवळ वैफल्याची गाणी गात नाही तर आशावादी भाव सुद्धा या कवितेतून व्यक्त होतो. अन्यायाचा प्रतिकार ही कविता करते, त्याच वेळी आशावादाचाच सूत्रही मांडते. ‘आता रडायचं तर त्यांच्यासाठी रड, जे जिवंत आहेत जे जगणार आहेत जे जळणार आहेत’ अशा पद्धतीचा आशावाद ही कविता देते. सामाजिक- सांस्कृतिक उत्थानाची एक चळवळ या कवितेतून व्यक्त होते. नवे अनुभव विश्व त्यातून व्यक्त होणारी सुख-दुःखे आशा-आकांक्षा, दुःख, चीड, संताप, आशावाद या विविध जाणिवा या कवितेतून व्यक्त होतात.

गावकुसाबाहेरचा माणूस शतकानुशतके वेदना, विद्रोह करत जीवन जगतो आहे. मुकाट्याने सारे सहन करतो आहे. त्याच्या वेदनेला वाचा फोडण्याचं काम त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता करते. त्यामुळे आजपर्यंतच्या रूढ संकल्पनांना धक्का देत नवा विचार, नवी जाणीव, नवा दृष्टिकोन देणारी ही कविता आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी समाजातील उपेक्षित घटकांमध्ये जी जाणीव निर्माण केली, त्यांना संघटित करत संघर्ष करण्याची प्रेरणा दिली. शिक्षणाची जाणीव निर्माण केली. ह्या प्रेरणेतून आलेल्या या काव्यजाणिवा खऱ्या अर्थाने नवा विचार व दृष्टी देतात. खडतर जीवनाच्या वेदना बालपणापासून अनुभवलेल्या त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता एका अर्थाने समाजजीवनात बंड उभारते.

त्यांची 'माणूस' नावाची कविता डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचार व भावभावनांवरील श्रद्धा जागवणारी आहे तर 'पाईक' या कवितेत माणसाच्या महानतेचा विचार व्यक्त झाला आहे. माणसाला एकदा केंद्रस्थानी ठेवले की परिघावरचे सगळे संदर्भ बदलतात, नव्याने जाणवतात व त्यासाठी त्या-त्या व्यक्तीला त्याच्यामधला माणूस जागवता आला पाहिजे, अशी कवीची धारणा आहे. संस्कृतीला हादरे देण्याचे सामर्थ्य बाबासाहेबांच्या दलित मुक्ती आंदोलनातील घटनांमध्ये आहे. 'सुरुंग' या कवितेत कवी म्हणतात,

महाडच्या चवदार तळ्याचे पाणी  
गावकुसाबाहेरील कोठारात पडले  
आणि सुरुंगाचा स्फोट झाला" (पृ.२९)

सामाजिक न्याय आणि समतेसाठी 'पाणी' व 'सुरुंगाचा स्फोट' हे अर्थपूर्ण प्रतीक वापरून सामाजिक विषमतेची ही जाणीव कवी येथे व्यक्त करतात.

'सुरुंग' मधील ही कविता केवळ वेदना व्यक्त करीत नाही तर वेदनेतून व्यक्त होणाऱ्या नव्या विचारधारा, समाजक्रांतीचा वेध या कवितेतून घेतला गेला आहे. 'अंगुलीमाल', 'कर्जमुक्ती', 'लोकशाहीचा फुलोरा', 'कोड', 'एकलव्य', 'दिवाना', 'आता रडायचे तर', 'प्रेषित' अशा कवितांमधून नवी जाणीव व संघर्षाची दिशा कवी व्यक्त करतात. त्यांची कविता म्हणजे केवळ शब्दरचना नाही, स्वप्नरंजन नाही तर खऱ्या अर्थाने आशयानुभव व नव्या जीवनाचा विचार ही कविता देते. त्र्यंबक सपकाळे यांच्याकडे अनुभवाची शिंदोरी आहे. शिवाय सामाजिक वास्तवाची जाणीव आणि ज्या संवेदना घेऊन ही कविता येते, त्यामुळे वेदनेतून साकारलेली कविता क्रांतीचा वेध घेते. मानवी जीवनाची सर्वसामान्यांच्या जगण्याची अस्मिता प्रकट करते. हेच त्र्यंबक सपकाळे यांच्या कवितेचे वेगळेपण व सामर्थ्य आहे हे म्हणता येईल.

'तुझ्या आरेला, मी कारे म्हटले  
... तर ते तुला सहन होत नाही !  
तुझ्या डोळ्याला मी डोळा भिडविला  
... तर ते तुला बघवत नाही  
तुझ्या मांडीला मांडी लावून बसलो  
तर तुला मळून येते !' (पृ.५)

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे विचार व गौतम बुद्धांची शांतीची बीजे त्यांनी अनुसरली. समाजाच्या विषण्णतेचे मार्मिक चित्रण ते आपल्या कवितेत करतात.

### ३.३.४. 'सुरुंग' मधील कवितांची आशयसूत्रे :

#### १. सर्वसामान्य माणसांचे जगणे हा अनुभव -

अत्यंत हलाखीच्या परिस्थितीत शिक्षण घेऊन मॅट्रिक झाल्यावर त्र्यंबक सपकाळे यांना रेल्वेत नोकरी मिळाली. रोज माणसांचे नमुने पाहायला मिळू लागले. या सर्व अनुभवातून सर्वसामान्य माणसांचे जगणे हा अनुभव त्यांनी विलक्षणरित्या कवितांमधून मांडला आहे.

रेल्वेत नोकरी करीत असतानाच सामाजिक व धार्मिक चळवळीत सहभाग घेतला आणि त्यातून लेखनाची प्रेरणा मिळत गेली. 'अस्मितादर्श' मासिकात १९६७ मध्ये 'माणूस' नावाची त्यांची पहिली कविता प्रकाशित झालेली दिसते. 'अस्मितादर्श'च्या माध्यमातून व अस्मितादर्श साहित्य संमेलनाच्या निमित्ताने अनेक मान्यवर साहित्यिकांशी संपर्क येत गेला आणि त्यातून आपल्या लेखनाला नवी दिशा मिळाली, असे कवी म्हणतात. ते आपल्या 'नागवा मी' कवितेत म्हणतात,

नागडा आलो  
पण इथेही नागवला गेलो  
समाज पुरुषाच्या अहंकाराने  
हे संस्कृतीप्रिय देशा !  
माझा नागडेपणा तुला  
कधी झाकताच आला नाही. (पृ.०१)

अशी परखड भावना कवी त्र्यंबक सपकाळे व्यक्त करतात.

## २. सामाजिक विषमता व समकालीन वास्तवाचे चित्रण -

सुरंग मधील कवितांमधून आशयाला पूरक असे नेमके शब्दप्रयोग वापरून कवीने सामाजिक विषमता, समकालीन वास्तव परिणामकारकपणे रेखाटले आहे. 'नागवा मी' या कवितेतून -

नागड्या पहाडावर  
नागडे बाभुळझाड  
नागडी झोपडी त्यात  
नागड्या गाड्या -मडक्यात  
राहतो नागवा मी (पृ.०१)

असे म्हणत विषमतेचे नेमके चित्र त्यांनी रेखाटले आहे. या कवितांमधील आशयसूत्रे समकालीन सामाजिक विषमता, अन्याय, अत्याचार, अज्ञान आणि अंधःकार दहशतवादाची जाणीव करून देणाऱ्या कविता आहेत. कुठल्याही प्रकारचा आधार नसल्याने आपल्या जीवन वास्तवाचा संचार हा उघडानागडाच असून जन्माला आल्यापासूनच विषमतेचे, अन्याय-अत्याचाराचे, जे दुःख अनुभवाला आले ते परखड शब्दात कवीने या कवितेतून व्यक्त केले आहे.

हे संस्कृतीप्रिय देशा!  
माझा नागडेपणा तुला  
कधी झाकताच आला नाही ! (पृ.०१)

असे म्हणत त्यांनी हा उपरोध कवितेतून मांडला आहे. त्यांची 'अंगुलीमाल' ही कविता सुद्धा सामाजिक विषमतेचा विचार व्यक्त करते.

नाथांचा जयजयकार करणारे  
पुष्कळच भेटले  
दंग होते ते आपल्याच कीर्तनात  
त्यांच्या अंतकरणात  
शिरला नाही माझा आक्रोश (पृ.२-३)

ही दुःख भावना सामाजिक विषमतेचे चित्र ध्वनित करते.

### ३. भोगलेल्या दुःखाचा आलेख मांडणारी कविता -

त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता भोगलेल्या दुःखाचा थेट आलेख मांडते. डॉ.गंगाधर पानतावणे सर म्हणतात, “त्र्यंबक सपकाळे शब्दांसाठी अडून बसत नाहीत. अण्णा भाऊंच्या लेखनाप्रमाणेच सपकाळे यांची कविता जीवनाभवातून जन्माला आलेली आहे. कल्पनेचे पंख लावून अंतरिक्षात ती विहार करीत नाही. तिला वास्तवाचे भान आहे.” एकूणच त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता आशयगर्भी आहे. पुष्कळदा ती गद्य रूपात व्यक्त होते, पण ती रूक्ष नाही. संवेदनशील मनाचा तो खरा आविष्कार आहे. खरा सच्चा अनुभव उत्कटपणे त्यांच्या कवितेतून प्रकट होतो. समाजाच्या दारुन अवस्थेने विकल झालेले त्यांचे मन कवितांमधून दिसून येते. समकालीन वास्तवाची सामाजिक विषमतेची अंतःकरणाची स्पंदने व ठिणग्या या कवितेत आहेत.

“ या गतिमान जगाचा  
हात पकडण्यासाठी धडपडत होतो  
हात झिडकारले जात होते  
मी पडत होतो  
जग हसत होते  
हसताना अंगुलीनिर्देश करीत होते” (पृ.३)

ही त्र्यंबक सपकाळे यांच्या कवितेतील दुःख भावना सामाजिक विषमतेचा निर्देश करणारी आहे.

‘सुरंग’ मधील कवितांमधून कवी त्र्यंबक सपकाळे यांनी स्वतःच्या पूर्वयुष्यात भोगलेले दुःख, केलेला संघर्ष, अडीअडचणीत वाट्याला आलेले जगणे यांना आपल्या कवितेतून शब्दरूप दिले आहे. समकालीन दुःखाला वाचा फोडताना पूर्वकाळापासून होत असलेल्या अन्याय अत्याचाराचे चित्र ‘कर्जमुक्ती’ सारख्या कवितेतून ते व्यक्त करतात.

“आयुष्याची हुंडी  
आमच्या पूर्वजांनी गहाण टाकली  
व्याजापायी खपल्या त्यांच्या कित्येक पिढ्या” (पृ.४)

असा अत्यंत परखड भाव त्यांनी आपल्या कवितेतून व्यक्त केला आहे. वर्षानुवर्ष सरंजाम वर्गाकडून उपेक्षित जगणं वाट्याला आलेल्या सामान्य माणसावर होणारा अन्याय, अत्याचार व त्यांच्या अज्ञानाचा घेतला जाणारा गैरफायदा हेच सूत्र त्र्यंबक सपकाळे यांच्या

बऱ्याच कवितांतून व्यक्त होते. हा दुःख भाव व्यक्त करताना 'माझ्याच दुःखाच्या भाराने वाकलेला मी' असे म्हणत आयुष्यभर क्षणोक्षणी सामान्य माणसाच्या दुःखाचे, त्याच्या अवहेलनेचे चित्र कवीने 'दिवाना' या कवितेतून व्यक्त केले आहे. हे दुःख व्यक्त करताना, 'मी जगलो पाहिजे यांच्या दुःखासाठी जगलो पाहिजे' असे कवी म्हणतात.

#### ४. परंपरा आणि आधुनिकता यांच्यातील जाणीव -

'डोळे', 'पाईक', 'माणूस' या त्यांच्या कविता विशेष महत्वाच्या वाटतात. 'डोळे' या त्यांच्या दीर्घ कवितेतून व्यापक असा दृष्टिकोन व्यक्त होतो. कुटुंबातील दारिद्र्य, आजूबाजूच्या माणसांकडून झालेला तिरस्कार, विषमतेची वागणूक हा भाव व्यक्त करताना-

'कलम' करायचे  
या सर्व डोळ्यांचे  
हवेत आता  
भगवंताचे डोळे" (पृ. ३६)

अशी व्यापक भावनाही ते व्यक्त करतात. जन्माला आल्यापासूनच अनंत अडचणी आणि आपल्याकडे समाजाचा पाहण्याचा दृष्टिकोन अत्यंत नेमक्या शब्दात कवीने व्यक्त केला आहे. 'डोळे' ही प्रतिमा वापरून समकालीन परिस्थिती, लोकांच्या वृत्ती-प्रवृत्ती, वागणे, तिरस्काराची भावना, विषमतेचे समाजातील चित्र कवीने या दीर्घ कवितेत रेखाटले आहे.

'पाईक' ही त्यांची कविता अज्ञान, अंधकार आणि संघर्षाची जाणीव करून देते. 'कोणी फुंकरली युगानुयुगाची अज्ञान अंधकाराची दहशतवादाची ही राखुंडी!' असे म्हणत परंपरा आणि आधुनिकता यांच्यातील जाणीव कवी रेखाटतात. ज्ञान, आत्मतेज याचा साक्षात्कार घडवणारा एक किमयागार आम्हाला भेटला आणि मरगळलेल्या मनांना पोलादी मनगटे, संकटे झेलण्याची सहनशीलता त्याने दिली अशी जाणीव कवी व्यक्त करतात. माणसाच्या मांगल्याची नवतेजाची नवी दिशा आम्हाला मिळाल्यामुळे समर्पित जीवनाची ही दीपमाळ आता उजळून निघेल असा आशावाद कवी व्यक्त करतात.

ज्यांनी तळहातावर शिरे घेतली  
माणसाला माणूस म्हणून जगण्यासाठी !  
ही बोधिवृक्षाची छाया  
ज्यात मला मिळाली  
समतेच्या ममतेची माया (पृ. ४०)

असा भाव कवीने 'पाईक' या कवितेत व्यक्त केला आहे.

#### ५. अन्याय, अत्याचार व तिरस्काराबद्दलची उपरोधिक भावना -

गावकुसाबाहेर उपेक्षितांचे जगणं ज्यांच्या वाट्याला आलं, त्यांनी वर्षानुवर्ष शतकानुशतके अन्याय - अत्याचार सहन केला. जीवनातील वेदना मुकाट्याने सहन करीत आपले दुःख पचविले. बदलत्या काळात मात्र या दुःखाला वाचा फोडणारी, त्याबद्दलची उपरोधिक भावना त्र्यंबक सपकाळे यांच्या कवितेतून व्यक्त होते. एका बाजूला सतत

अपमान, अन्याय, तिरस्कार सहन करावा लागला त्यामुळे त्याबद्दलची उपरोधिक भावना 'स्वागत' या कवितेतून कवी व्यक्त करतात.

हे पशु-पक्ष्यांनो, हिंस्र पशुंनो  
तुमचे स्वागत करता येत नाही  
कारण तुमचा पाणवठा अलग नाही (पृ. ३३)

असे म्हणत समाजातील चातुर्वर्ण्य व्यवस्था, जातीय विषमता, काळा-गोरा असा भेद याची स्पष्ट जाणीव ते करून देतात. 'बाराखडी' ही त्यांची कविता अपघाताने शाळेत गेल्यामुळे तिथे जो अनुभव आला त्याचे चित्र रेखाटणारी कविता आहे. शाळेच्या प्रत्येक पायरीवर अपमानित होण्याचा अनुभव आणि प्रत्येक अनुभव जातीची आठवण करून देणारा होता. 'बाराखडी शिकल्यावर तुरुंगातून सुटल्याचा आनंद झाला' असे कवी म्हणतात. 'वाचीत होतो मास्तराविणा क्षितिजावरती-क्षितिजावरती' असा विलक्षण आंतरिक अनुभव ते व्यक्त करतात.

#### ६. बदलत्या समाजवास्तवाचे संदर्भ -

'सुरुंग' मधील कवितांमधून दुःख जाणीव व्यक्त करतानाच सामाजिक परिवर्तन घडावे, नव्या दिशेने माणसातील माणुसकीचा झरा उगमाला यावा, अशी आकांक्षा घेऊन ही कविता अंतःकरणात खोलवर नवा ठसा उमटविते. 'माणूस' ही त्यांची आणखी एक महत्त्वाची कविता होय. ज्या कवितेत त्यांनी **माणसाच्या महानतेची जाणीव** व्यक्त केली आहे. ज्यांच्या वाट्याला दुर्दैवाने अभागी जगणे आले त्यांचा उद्धार करण्यासाठी थोर महात्मे यांना कशाला तसदी देता असे म्हणत तुम्हीच आता 'नवतेजाची पहाट' उगवण्यासाठी तुमच्यातील माणूसपण जागविण्याचे आवाहन कवी करतात. आपल्याच नशिबाला दोष देत, बदनाम करीत शतकानुशतके आपण पिचत दुःख सहन करीत जीवन जगत आलो आहोत.

हे अभाग्यांनो !  
जागवा तुमच्यातील माणूस तुम्हीच स्वतः  
त्यातून उगवेल एखादी पहाट  
नवतेजाची - माणसाच्या महानतेची (पृ. ४३)

असे मार्मिक भाष्य करणारी त्यांची 'माणूस' ही कविता आहे. 'आम्ही आता सूत्रधार आहोत' ही कविता वर्षानुवर्ष अन्याय अत्याचार ज्यांनी सहन केला, गावकुसाबाहेरचे जगणे ज्यांच्या वाट्याला आले त्यांना आपले दुःख कधी व्यक्त करताही आलं नाही, या विषयीचा भाव व्यक्त करते.

आमच्या विशाल बाहुंनी  
आम्ही साकार केलेली पात्रे  
तुम्हास निभवायची आहेत.  
आमच्या मनाचे समाधान होईपर्यंत.

असे म्हणत समाजातील बदलांची जाणीव कवी करून देत आहेत.

## ७. उपेक्षितांच्या संघर्षमय जीवनाचे चित्रण -

सुरुंग (काव्यसंग्रह) व  
सूर्यस्तूप (कथासंग्रह)

नवी समाजरचना अस्तित्वात यावी, आधुनिक विचार स्वीकारला जावा आणि माणूस म्हणून सर्वानाच सन्मानाची वागणूक मिळावी अशी अपेक्षा कवीची आहे. 'हे भाग्य मात्र तुम्हास लाभणार आहे!' ही कविता उपेक्षितांचे संघर्षमय जीवन चित्रित करणारी आहे. शब्दांच्या जाळ्यातील मायावी भारुडे आता पुरे आहेत. जो संघर्ष आम्ही केला, जीवन कलह तुडविताना अन्याय-अत्याचार सहन केला, त्याबद्दल एक अक्षरही लिहिले गेले नाही. आम्ही केवळ अश्रू पिऊन तडफडत राहिलो ही खंत कवी व्यक्त करतात.

माणूस नुसत्या भाकरीवर जगत नाही  
त्यालाही असते मन संवेदनाक्षम  
पण ज्यांनी मिळू दिली नाही भाकर  
त्यांना मनाचे काय? (पृ.४८)

असे प्रश्न उपस्थित करत सन्मानाच्या वागणुकीची अपेक्षा कवी करीत आहेत. अन्याय अत्याचाराचे हादरे सहन केले. अजूनही तुफान सुरू आहे, संघर्ष सुरू आहे पण या क्रांतीचे भक्षही आम्हीच होत आहोत, ही दुःख भावना या कवितेतून व्यक्त होते. आम्ही शतकोनशतके या संघर्षात होतो, त्याबद्दल तुम्ही एक अक्षरही लिहिले नाही. अश्रू पिऊन आम्ही तडफडत राहिलो. त्याची कुणाला कधी खंतही वाटली नाही. उपेक्षितांच्या जीवनाचा हा संघर्षमय प्रवास कवीने परखड शब्दात मांडला आहे. दुःख, अन्याय, अत्याचार आम्ही सहन केले. त्याबद्दलचा असंतोष मनात कायम खदखदत आहे. बदलत्या काळात हा ज्वालामुखी आता जागृत होणार असून समाजातील क्रांतीचा, बदलाचा संदर्भ कवी या कवितेतून व्यक्त करतात.

## ८. आत्मजाणिवेचे भान देणारी कविता -

'सुरुंग' मधील अनेक कवितांमधून सामाजिक वास्तव मांडतानाच आत्मजाणीव करून देण्याचा प्रयत्न कवी करत आहेत. हे आशयसूत्र अनेक कवितेतून आलेले दिसते. 'हे पाथरवटा...' ही त्यांची कविता माणसांच्या मानवतेची जाणीव करून देणारी आहे.

घालावी लागेल जखमेवर  
तुझी तुलाच फुंकर  
तुलाच सोसावे लागतील  
ओघळणारे अश्रू गालावर ! (पृ.५०)

असे म्हणत आपल्या आत्मोन्नतीसाठी, विकासासाठी आपल्याला प्रयत्न करावे लागतील, ही महत्त्वपूर्ण जाणीव कवी करून देतात. थोर महात्मे यांनी जे तत्त्वज्ञान जगाला दिले, जो विचार दिला त्याची अंमलबजावणी, प्रत्यक्ष कृती मात्र होताना दिसत नाही. म्हणून सामाजिक समता, न्याय, बंधुभावाचा विचार देणाऱ्या नव्या जाणिवा स्वीकारून 'मानवतेचे पवित्र मंदिर तुलाच घडवावे लागेल', असे कवी म्हणतात. त्यांची 'दिवस' ही छोटी कविता हाच आशावाद व्यक्त करते. 'अशी निराश होऊ नकोस जातील निघून हेही दिवस' आपले

दिवस आता दूर नाहीत ही कविता आधुनिक काळात काही नवे बदल घडतील आणि त्यातून आपले दिवस आता दूर नाहीत असा विचार कवी व्यक्त करतात.

अस्मितेला जागे करून  
‘मी’ पणाची जाणीव देऊन  
तो सूर्य गेला  
या थंड गोळ्यास ऊब देऊन.

असे म्हणत डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी दिलेला विचार व प्रेरणा घेऊन समाजात बदल घडत आहेत. त्याबद्दलची नव्या अस्मितेची जाणीव कवी आपल्या कवितेतून व्यक्त करतात.

#### ५.३.४. ‘सुरुंग’ मधील कवितेतील वेदना आणि विद्रोह -

त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता दुःख, दैन्य, दास्य, दारिद्र्य व अवहेलना संबंधीची वेदना व्यक्त करते. विषमता आणि गुलामीच्या जोखडातून कसे बाहेर पडता येईल, यासाठीचा संघर्ष या कवितेतून व्यक्त होतो. मानव मुक्तिसाठी कराव्या लागणाऱ्या संघर्षातूनच त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता विद्रोहाचा पवित्रा घेते. ‘सुरुंग’ मधील त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता दुःख भावनेबरोबरच वेदना व विद्रोहही व्यक्त करते. केवळ आता दुःख उगाळत बसून काही उपयोग नाही तर विद्रोहाची भावनाही या कवितेतून व्यक्त होते.

आता रडायचेच तर  
त्यांच्यासाठी रड,  
जे जिवंत आहेत  
जे जगणार आहेत  
जे जळणार आहेत (पृ. १३)

अशा आशावादही त्यांनी कवितेतून मांडला आहे. त्यांची ‘बाराखडी’ ही कविता शिक्षणासारख्या महत्वाच्या क्षेत्रात उपेक्षित घटकाला मिळणारी विषमतेची वागणूक कशी होती, याचे चित्रण करते. अत्यंत नेमक्या व स्पष्ट शब्दात शिक्षणातील विषमतेचे चित्र कवीने मांडले आहे.

‘बाराखडी शिकल्यावर  
हायसे वाटले ; आनंद झाला  
तुरुंगातून सुटल्याचा ” (पृ. १४)

ही वास्तव जाणीवही कवीने व्यक्त केली आहे.

‘सुरुंग’ मधल्या अनेक कवितांमधून त्र्यंबक सपकाळे विद्रोहाची जाणीव व्यक्त करतात. ‘**तर मी काय करू?**’ ही त्यांची समकालीन वास्तवावर अत्यंत परखड भाष्य करणारी महत्वाची कविता आहे.

आता रडू  
कोणा कोणासाठी?  
आहेत कुठे  
माझ्या डोळ्यात अश्रू?  
कोरड्या पापणीतून निघतात विद्रोहाच्या ठिणग्या  
त्यांनी पेट घेतला तर मी काय करू ? (पृ. १५)

अशी विद्रोही जाणीव व्यक्त करीत समकालीन वास्तवावर, सामाजिक विषमतेवर आणि सामान्यांवर होणाऱ्या अन्याय अत्याचाराचे परखड भाष्य त्यांनी या कवितेतून मांडले आहे. आपल्या जीवनाच्या सर्वच वाटा बंद झाल्या आहेत. समाज- संस्कृतीने सामान्यांचे जगणे किती वेदनादायी बनले आहेत, याचे चित्र मांडतानाच या समाज जीवनात आपल्याला प्रेम, वात्सल्य मिळालेच नाही. दुःख भावनाही ते व्यक्त करतात. त्यांची 'प्रेषितांनो !' ही कविता एक प्रकारचा विषमतेविरुद्धचा आक्रोश करत जणू विषमतेविरुद्धचा इशारा देते आहे. 'शांतता ही वादळापूर्वीची. प्रेषितांना! असे म्हणत येणाऱ्या प्रलयंकाराची जणू जाणीवच कवी करून देत आहेत.

#### ५.३.५. 'सुरुंग' मधील कवितेतील प्रतिमा व भाषाशैली -

त्र्यंबक सपकाळे यांच्या कवितेची प्रेरणा ही समकालीन समाजवास्तवातून अनुभवला आलेले जगणं हीच आहे. ह्या कवितांमधून व्यक्त होणाऱ्या जाणिवा, संवेदना, प्रतिमा, कवितांची शीर्षके आणि त्यातून मांडला जाणारा मूल्यविचार या गोष्टी ठळकपणे वेगळ्या व वैशिष्ट्यपूर्ण जाणवतात. ही कविता स्वातंत्र्य, समता, बंधुता व सामाजिक न्याय या लोकशाही मूल्यांचा पुरस्कार करते. त्याचवेळी आजपर्यंतच्या समाजव्यवस्थेने उपेक्षितांच्या जगण्यामध्ये कायम जो अडसर निर्माण केला, त्या व्यवस्थेलाच 'सुरुंग' लावण्याचा प्रयत्न ही कविता करते. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांनी दिलेले स्वातंत्र्य, समता व न्यायचे तत्त्व कवीला महत्त्वाचे वाटते. स्वातंत्र्य मिळाले पण शोषण थांबले नाही. अन्याय- अत्याचार सुरूच राहिला. माणसाला माणूस म्हणून सन्मानाची वागणूक मिळाली नाही. समता निर्माण होण्याऐवजी विषमता कशी वाढत गेली, याबद्दलची जाणीव कवी त्र्यंबक सपकाळे नेमक्या शैलीतून व्यक्त करतात.

त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता उत्कट भावना आणि लोकभाषेचा आविष्कार करणारी कविता आहे. महाड येथील चवदार तळ्याचे पाणी अस्पृश्यांना मिळावे यासाठी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी केलेल्या सत्याग्रहाचे प्रस्थापित समाजव्यवस्थेवरील परिणाम प्रतिकात्मकरित्या मांडणारी त्यांची 'सुरुंग' ही कविता विशेष महत्त्वाची ठरते. कवी लिहितात,

महाडच्या चवदार तळ्याचे पाणी  
गावकुसाबाहेरील कोठारात पडले  
आणि सुरुंगाचा स्फोट झाला.  
शिडी नसलेली चिरेबंदी  
चारमजली उन्मत्त गढी  
ढासळू लागली  
सुरुंगाचा स्फोट अजून होत आहे (पृ. २९)

त्र्यंबक सपकाळे यांच्या कवितेने दलित कवितेला विधायक असे वळण दिले. हे त्यांच्या काव्यलेखनातचे योगदान म्हणावे लागेल. त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता सामाजिक व सांस्कृतिक संदर्भात निश्चित काही विचार देते, संदेश देते. जीवनवादी, माणूसकेंद्री परिवर्तनाची प्रक्रिया या कवितेतून मांडली गेली आहे. वेदना, विद्रोह, नकार मांडत परखड शब्दात ही जाणीव त्यांनी आपल्या कवितेतून व्यक्त केली आहे. शब्दरचना आणि त्यातून होणारी अभिव्यक्ती यामुळे त्यांच्या कवितेतली परिणामकारकता नक्कीच वाढलेली आहे. नेमका आशय व्यक्त करताना योग्य रूपक, प्रतिमा वापरून भाषिक वेगळेपण साधण्याचा प्रयत्न ही कविता करते.

थोडक्यात, 'सुरुंग' या काव्यसंग्रहातील कविता विविध सूत्र मांडणाऱ्या कविता आहेत. उपेक्षितांचे जगणे ज्यांच्या वाट्याला आले, दुःख आणि दैन्य त्यांनी वर्षानुवर्ष सहन केले. अन्याय अत्याचार गिळून मानवतेचा विचार स्वीकारला. समता, बंधुभाव, न्याय, सामाजिक समरसता, संवेदनशीलता या कवितांमधून व्यक्त होते. स्वानुभाव व व्यापक सामाजिक विचार यामुळे या कविता वेगळ्या उंचीवर गेलेल्या आहेत. सामान्यांच्या भवितव्याचा आशावाद तेवढ्याच प्रत्येकारीपणे कवीने रेखाटला आहे. अन्यायाचा प्रतिकार हे अनेक कवितांमधील महत्त्वाचे सूत्र दिसते. त्याच वेळी विलक्षण नवे सामर्थ्य, विचारांची जाणीव, नवा दृष्टिकोन आणि कवीच्या अनुभवाचा बहुआयामी आशय या कवितांमधून व्यक्त होतो.

### ३.४. विषय विवेचन - 'सूर्यस्तूप' ( कथासंग्रह) - आत्माराम गोडबोले

३.४.१. 'सूर्यस्तूप' या कथासंग्रहाविषयी -

३.४.२. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांचे - आकलन व विश्लेषण

३.४.३. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांची आशयसूत्रे

३.४.४. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांचे स्वरूप - विशेष

३.४.५. 'सूर्यस्तूप' कथांमधील पात्रचित्रण, निवेदन व भाषाशैली

#### ३.४.१. 'सूर्यस्तूप' या कथासंग्रहाविषयी -

'सूर्यस्तूप' हा आत्माराम गोडबोले यांचा इ.स.२०१६ मध्ये प्रकाशित झालेला दुसरा कथासंग्रह आहे. आत्माराम गोडबोले हे २००० नंतरच्या काळातील एक महत्त्वाचे कथालेखक आहेत. समाजवास्तवाचा वेध घेत परिवर्तनाचा संदेश देणाऱ्या त्यांच्या सर्वच कथा समाजवास्तवाचे नेमके चित्रण करतात. परिवर्तन व प्रबोधन करणे हाच त्यांच्या कथालेखनाचा मुख्य उद्देश दिसतो. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या विचार व कार्यातून प्रेरणा घेऊन समाजात खूप काही स्थित्यंतर झाले. सोई-सुविधा मिळाल्यामुळे उपेक्षित व दुर्लक्षित समाज विकासाच्या दिशेने वाटचाल करू लागला. ही एक बाजू असली तरी दुसऱ्या बाजूने अजूनही खूप मोठा समाज दारिद्र्य, उपासमार, जीवनसंघर्ष व उपेक्षित जीवन जगतो आहे. तसेच सुख-समृद्धी आल्यामुळे समाजातील काही घटक समाजापासून दूर जात असल्याचे चित्र दिसते आहे. या सर्वांचे यथार्थचित्रण आत्माराम गोडबोले यांच्या कथेमध्ये आपल्याला दिसते. 'सूर्यस्तूप' या कथासंग्रहात एकूण अकरा कथा समाविष्ट आहेत. बर्फाचे घर, हिरवं धुकं, सामना, मरीबाचा दरबार, घरभेदी, पँथर, प्राध्यापक गुलाबराव कांबळे, नातंसत्तेचा बळी, रिझर्वेशन, सूर्यस्तूप, हिसाब या ११ कथा या कथासंग्रहात

आहेत. यातील 'बर्फाचे घर' ही पहिली कथा 'लोकानुकंपा' व 'अस्मितादर्श' वार्षिक विशेषांकात पूर्व प्रकाशित झालेल्या आहेत.

सुरंग (काव्यसंग्रह) व  
सूर्यस्तूप (कथासंग्रह)

### ३.४.२. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांचे आकलन व विश्लेषण -

'सूर्यस्तूप' मधील कथा समाजवास्तवाचा वेध घेत परिवर्तनाचा संदेश देणाऱ्या महत्त्वाच्या कथा आहेत. समकालीन सामाजिक जीवनाचे भान कथा लेखकाला अस्वस्थ करते आहे आणि त्यातून समाजातील विविध तऱ्हेची, विविध स्वभावाची, दांभिक, बुरखा पांघरलेली व स्वतःच्या आनंदी जगण्यासाठी दुसऱ्याला दुःखात ढकलणारी माणसे या कथांमधून व्यक्तिचित्राच्या रूपाने साकारली आहेत. याला प्रतिक्रिया म्हणून बाबासाहेबांनी दिलेल्या विचारांपासून दूर चाललेल्या समाजाला रोखण्यासाठी मार्गदर्शन व नवी दिशा देण्यासाठी 'मी' शब्दांच्या भिंती बांधतो आहे'. अशी कथालेखनामागची भूमिका लेखकाची आहे. स्वशोध किंवा आत्मशोध एवढा संकुचित अर्थ न घेता कथेला व्यापक पातळीवर मांडण्याचा प्रयत्न लेखकाचा आहे. कथासंग्रहाच्या प्रस्तावनेतच लेखकाने आपली कथा लेखनामागची स्पष्ट भूमिका मांडलेली दिसते. या कथा नवी समाजव्यवस्था व कथनशक्यता मांडण्याचा प्रयत्न करतात. आशयसूत्र, व्यक्तिचित्रण, प्रसंगचित्रण, भाषाशैली, निवेदन व समाजवास्तव या सर्व घटकांमधून आत्माराम गोडबोले यांची कथा नव्या शक्यता मांडण्याचा प्रयत्न करते. उपेक्षित वर्गाचे दुःख, वेदना व त्यांच्या जगण्याचे अनेक संदर्भ कथालेखकाने या कथांमधून मांडले आहेत.

'बर्फाचे घर' या पहिल्याच कथेत दाजीच्या रूपाने सामान्य माणसाचा जीवनसंघर्षच जणू कथा लेखकाने अत्यंत वास्तव पद्धतीने मांडला. संजय या आपल्या मुलाचे शिक्षण झाल्यावर त्याला चांगली नोकरी मिळेल आणि आयुष्यभर आपण केलेल्या कष्टाचे चीज होईल, असे स्वप्न पाहणाऱ्या दाजीचे अचानक निधन होते. निवेदकाला दाजीच्या पूर्व आयुष्यातल्या सगळ्या आठवणी जाग्या होतात. सामाजिक वास्तवात घडत गेलेले हे बदल लेखकाने नेमक्या शब्दात या कथेतून टिपलेले आहेत. 'बर्फाच्या घरात राहणारी माणसं' दाजीला जवळ कशी करतील, कारण त्यांना माहित आहे कुणाला आपण जवळ केले तर आपणाला संघर्ष करावा लागेल. दुसऱ्यासाठी स्वतःला वितळून घ्यायची तयारी त्यांच्या वृत्तीत नाही. ही नवी समाज वास्तविकता कथा लेखकाने नेमक्या शब्दात टिपली आहे.

'हिरवं धुकं' ही कथा महावीर बोधे या एका खेड्यातून शहरात आलेल्या सामान्य व्यक्तीची संघर्ष कथा आहे. फारसे शिक्षण न झाल्यामुळे नोकरीची संधी उपलब्ध न होणाऱ्या आणि म्हणूनच पडेल तो व्यवसाय करण्याचा प्रयत्न करणाऱ्या एका सामान्य माणसाचा जीवनसंघर्ष या कथेत आला आहे. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचार व कार्यातून प्रेरणा घेऊन समाजात मोठे स्थित्यंतर झाले. सोयीसुविधा मिळाल्या, समाजातील काही वर्ग प्रगतीच्या दिशेने पुढे गेला, पण काहींच्या वाट्याला मात्र अजूनही संघर्षच आहे. जात व्यवस्थेत माणसांची होणारी कोंडी, त्याबद्दलची अस्वस्थता व त्यासाठी करावा लागणारा संघर्ष हा विचार 'हिरवं धुकं' या कथेतून मांडला गेला आहे.

'सामना' या कथेत डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांची जयंती साजरी करण्याविषयी समाजमंदिराच्या समोरच्या पटांगणात मीटिंग आयोजित केली जाते. जयंतीचा विषय असल्यामुळे सर्वांमध्येच उत्साहाचे वातावरण असते. जयंती कशी साजरी करायची, कोणाकोणाला भाषणासाठी बोलवायचे या विषयावर जेव्हा चर्चा येते; तेव्हा 'पन्नास वर्ष

बरीच भाषणे ऐकली काय फायदा झाला? काय सुधारणा झाली?’ असा प्रश्न तरुण वर्गामधून विचारला जातो. भाषणांऐवजी भीमगीतांचा जंगी सामना जयंतीच्या निमित्ताने आयोजित करायचा अशी चर्चा बैठकीत होते. तरुण वर्गाने हा विषय उचलून धरल्यामुळे बाकीच्यांना थोडे नमते घ्यावे लागले. शिवाय गड्याचा आणि बाईचा सामना खुद्द गावाला ऐकायला मिळणार म्हणून सारेजण त्यासाठी उत्सुकही होते.

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या पुतळ्याजवळ भव्य स्टेज बांधले जाते. मोठा मंडप टाकला जातो. बायका-पोरं, लहान-मोठी माणसे त्या कार्यक्रमाला हजेरी लावतात. रात्रभर हा कार्यक्रम रंगत जातो खरा पण त्याच वेळी मल्हारी पेटीमास्तर ज्यांनी आपल्या आयुष्यभर ‘भीमज्योत गायन मंडळात’ गाण्याचे काम केले ते मल्हारी पेटीमास्तर मात्र ‘सामन्या’वर नाराज होते. काळाबरोबर या सगळ्या कार्यक्रमांमध्ये झालेले बदल त्यांना तितकेसे आवडले नसल्याची खंत मल्हारी यांनी मस्के गुरुजींजवळ व्यक्त केली. ज्या आत्मियतेने रात- रात आपण गायनाचे कार्यक्रम केले, ती परिस्थिती आता राहिली नाही. त्यामुळे मल्हारी पेटीमास्तर या सामन्याच्या कार्यक्रमात मात्र नाराज झाले. शेवटी पहाटेच्या वेळी स्वतः मल्हारीने वामनदादा यांचे गीत गाऊन परंपरेला पुन्हा एकदा जागे करण्याचा प्रयत्न केला. मल्हारीचे गीत गायन तल्लीन होऊन सर्व मंडळी ऐकून थक्क झाली. एकूणच नवतेच्या नावाखाली सामाजिक व्यवस्थेत वेगळेच जे काही घडू लागले आहे, त्यावर ही कथा भाष्य करते. परंपरा आणि नवता यांच्यातला समन्वय साधत ही कथा नवा मूल्यविचार देते.

**‘मरीबाचा दरबार’** ही कथा परंपरेने उदरनिर्वाहासाठी केले जाणारे व्यवसाय आणि त्यात आधुनिक काळात घडत गेलेले बदल यावर भाष्य करणारी कथा आहे. सोनबा लीडर अण्णाभाऊ साठे नगरातील प्रत्येकाच्या घरी जाऊन काळाबरोबर जुन्या गोष्टी टाकून देऊन आपण नव्याचा स्वीकार केला पाहिजे असेच समजावण्याचा प्रयत्न करतो आहे. अन्य माणसांमध्ये कशा सुधारणा झाल्या आणि आपण पोतराज मात्र आहे तसेच राहीलो, हे समजावून सांगण्याचा प्रयत्न त्याचा होता. मरीबा पोतराजला पिढ्यानपिढ्या आपल्या कामातच आनंद वाटत होता. पोतराज असल्याचं दुःख नव्हते. सुखाची भाकरी मिळते. वरून समाजाचा मानही मिळतो, आणखी काय पाहिजे? अशी त्यांची धारणा होती परंतु सोनबा लीडर मात्र मरीबा पोतराजला बदलवण्याचा प्रयत्न करत होता. सोनबा लीडरने गावात मेळावा घेतला. स्वतःचे कौतुक करून घेतले आणि स्वार्थापायी मरीबा पोतराजासारख्या अनेक सामान्य माणसांची फसवणूक करीत केला. **स्वतःच्या फायद्यासाठी बुरखा पांघरून दुसऱ्याला दुःखात लोटणारी सोनबा लीडर सारखी माणसे आणि त्यामुळे सामान्यांच्या जगण्यातला संघर्ष** कथा लेखकाला या कथेतून सूचित करायचा आहे.

**‘घरभेदी’** ही आत्माराम गोडबोले यांची कथा मानवी वृत्ती-प्रवृत्तीत दिवसेंदिवस घडत गेलेले बदल व स्वतःच्या स्वार्थासाठी माणसे कोणत्या थराला जातात याबद्दलचा उद्बोधक विचार मांडणारी कथा आहे. **पितांबर कांबळे** यांच्या रूपाने सर्वसामान्य समाजातून श्रीमंत झालेली काही माणसे स्वतःच्या मोठेपणाचा कसा आव आणतात आणि समाजात आपण काहीतरी वेगळे आहोत हे दाखवण्याचा प्रयत्न करतात. बऱ्याचदा माणसामाणसातील वाद मिटवणे, लग्न जमवणे, भांडणे सोडविणे हे सर्व पीतांबर कांबळे करतात पण जेव्हा स्वतःच्याच घरात काही प्रश्न निर्माण होतात तेव्हा मात्र त्यांचे पाय कसे जमिनीवर येतात.

याबद्दलचा उद्बोधक विचार ही कथा देते. सुख-समृद्धी आल्यामुळे काही माणसं समाजापासून दूर गेली. माणसा-माणसांमध्ये अंतर वाढू लागले. वागण्या-बोलण्यात कोरडेपणा कसा येत केला आणि त्यातून समाजाची संभ्रमावस्था निर्माण झाली. त्याबद्दलचे भाष्य करणारी 'घरभेदी' ही त्यांची महत्त्वाची कथा आहे.

**'पँथर', 'प्राध्यापक गुलाबराव कांबळे', 'हिसाब'** या कथांमधून सुख-समृद्धी आल्यामुळे समाजापासून तुटलेल्या आणि स्वतःच्याच स्वार्थी जगात वावरणाऱ्या माणसांमधला कोरडेपणा लेखकाने मांडला आहे. विविध स्वभावाची स्वतःच्याच सुखात व आनंदात रममाण झालेली ही माणसे केवळ आपल्याच कोशामध्ये कशी गुंतून गेली, हेच सांगण्याचा प्रयत्न ही कथा करते. 'प्राध्यापक गुलाबराव कांबळे' या कथेतील गुलाबराव कांबळे हे प्राध्यापक झाल्यानंतर कसे अविर्भावात जगत होते. दुसऱ्याला तुच्छ व कमी लेखून स्वतःच्याच मोठेपणाचा आव आणणाऱ्या व्यक्ती समाजात कशा दिसतात. कुटुंब, नातेवाईक, समाज यांच्यासाठी कुठल्याही प्रकारचा त्याग न करता केवळ स्वतःच्या सुखात वावरणाऱ्या गुलाबराव कांबळे यांची व्यक्तिरेखा लेखकाने रेखाटली आहे. समाजाचा हा बोथटपणा कथा लेखकाला अस्वस्थ करतो.

**'रिझर्वेशन'** ही या संग्रहातील कथा कायद्याने हक्क व अधिकार समाजातील सर्व घटकांना मिळाले असले तरी अजूनही समाजाची मानसिकता बदललेली नाही. शीलवंत कांबळे यांना झेंडावंदनाचा मान देऊन त्यांच्या हस्ते झेंडावंदन करण्याचे नियोजन असूनही ऐनवेळी बापू सरपंचांनीच झेंड्याची दोरी ओढून राष्ट्रध्वज फडकवला आणि समजातील विषमता, नाहीरे वर्गाचे दुःख, व्यथा व वेदना शब्दबद्ध केल्या आहेत.

**'सूर्यस्तूप'** ही शीर्षक कथा समाजवास्तवाचा नेमका वेध घेत परिवर्तनाचा संदेश देते. एकीकडे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या क्रांतिकारी विचारांनी प्रेरणा घेऊन समाज प्रकाशमान झाला. समाजातील एक वर्ग विकासाच्या दिशेने जात असताना दुसऱ्या बाजूला अजूनही जुन्या अंधश्रद्धा परंपरा यात काही लोक अडकून पडले आहेत. देवकाबाई यांच्या मनातील अस्वस्थता, गौतमने त्यांना वेळोवेळी समजावण्याचा केलेला प्रयत्न आणि तरीही परीस्थितीपुढे शरण जाऊन हतबल झालेल्या माणसांची ही कथा आहे. आत्माराम गोडबोले यांच्या कथा रंजनवादी नाहीत तर मानवतावादी, परिवर्तनवादी दृष्टिकोन, नवा विचार या कथा देतात. आपण जे पाहिले, अनुभवले त्याबद्दलची अस्वस्थता या कथेतून येते, असे कथालेखक म्हणतात. सामाजिक व्यवस्थेतील माणसे, सभोवतालचे जग यात जाणवणारे समकालीन वास्तव त्यांच्या या कथेतून व्यक्त होते. म्हणूनच या सर्व कथा, नवा आशय, जीवनानुभव व मूल्यविचार देणाऱ्या कथा ठरतात.

### ३.४.३. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांची आशयसूत्रे -

गावगाड्यात विस्थापित झालेल्या लोकांच्या जगण्यातील संघर्ष, तेथील ताण-तणाव, जगण्यासाठी करावी लागणारी लढाई, आकाराला येणारी नवी समाज वास्तवता अशी **आशयसूत्रे** आत्माराम गोडबोले यांच्या कथांमध्ये दिसतात. हजारो वर्षांच्या जुलमी जोखडातून डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांनी बहुजन समाजाला विकासाचा नवा मार्ग दाखवला. स्वातंत्र्य, समता, बंधुता, न्याय याद्वारे नवी दिशा दिली. त्या प्रेरणेतून 'सूर्यस्तूप' मधील कथा व त्यातील आशयानुभव मांडल्याचे लेखक सांगतात. या कथांमधून अनेक

प्रश्नही त्यांनी उपस्थित केले आहेत. अंतर्मुख होऊन विचार करायला लावणाऱ्या, एक प्रकारे स्व-शोध घेणाऱ्या या कथा आहेत, असे म्हणता येईल. 'चार माणसे एकत्र आली तर त्यांच्या केंद्रस्थानी कोणीतरी श्रीमंत माणूस दिसू लागला म्हणून बोलण्याचा विषयही तोच असायचा. त्यामुळे सद्यस्थितीत जिव्हाळ्याचे झरे आटले आहेत. माझी कथा अशा माणसांना टिपते आहे. ओलाव्याचा सल्ला देते आहे', अशी कथा लेखनामागची भूमिका आत्माराम गोडबोले मांडतात.

आज आंबेडकरी समाज संभ्रमात आहे कारण समाजकारण, राजकारण, संस्कृती, उद्योग, अर्थकारण यात आपणाला अजूनही बहुजन समाज विकासाच्या मूळ प्रवाहात आलेला दिसत नाही. बाबासाहेबांनी दिलेला संदेशाचा जो तो आपल्या सोयीनुसार अर्थ लावू लागला. याने मी अस्वस्थ होतो आणि त्यातूनच मला कथेचे बीज सापडते. माझी कथा त्यातून आकार घेते, अशी भूमिकाही लेखकाने मांडली आहे. एकूणच 'सूर्यस्तूप' मधील या सर्वच कथा अस्वस्थतेने जन्म घेतात. भूप्रदेश, माणसे, निसर्ग, भोवताल यातून लेखकाला जे विषय सापडत गेले आहेत, त्याला आपल्या सृजनशील प्रतिभेतून कथारूप देण्याचा प्रयत्न कथा लेखकाने आत्माराम गोडबोले यांनी केलेला दिसतो.

#### ३.४.४. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांचे स्वरूप - विशेष

'सूर्यस्तूप' मधील कथा जीवन वास्तवाला सामोरे जातात. लेखकाने जो जीवनानुभव या कथांमधून मांडला आहे, तो सामाजिक समतेचा, संघर्षाचा नेमका भाव व्यक्त करणारा आहे. उपेक्षित, दलित समाजाच्या शोषणाचे दुष्टचक्र शतकानुशतके सुरू आहे. हा भूतकाळ बदलून वर्तमानात नव्या दिशेने परिस्थिती बदलण्यासाठी सकारात्मक विचार ही कथा देते. केवळ आजच्या समकालीन वास्तवाचे चित्र त्यात नाही तर भविष्यकाळात परिस्थिती बदलावी, सुधारणा घडाव्यात. समाजातील अनास्था, लाचारी नाहीशी होऊन सामाजिक समरसता येण्यासाठी ही कथा मार्गदर्शन करते.

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांनी दिलेला संदेश, विचार व प्रेरणा याचा जो तो आपल्या सोयीनुसार अर्थ लावू लागला. हे पाहून लेखक म्हणतात, 'मी अस्वस्थ होतो आणि त्यातूनच मला कथेचे बीज सापडते. ते व्यक्त करण्यासाठी मी कथेचा आधार घेतो'. कथा या साहित्यप्रकारात परिवर्तनाची अफाट ताकद असते. त्या -त्या काळातील वर्तमानाला नेमक्या रूपात मांडण्यासाठी हा लेखनप्रकार महत्त्वाचा ठरतो. कथेच्या आशय विषयातून केवळ रंजनवादी दृष्टिकोन न मांडता मानवतावादी व परिवर्तनवादी विचार देणाऱ्या आत्माराम गोडबोले यांच्या या कथा आहेत. 'सूर्यस्तूप' मधील या कथा एका बाजूला दलितांना कराव्या लागणाऱ्या संघर्षाची जाणीव देणाऱ्या कथा आहे. आत्मशोध, मानसिक स्वातंत्र्याचा विचार व्यक्त करणारी ही कथा आहे. तसेच आशय संपन्नता व अनुभव संपन्नता ही या कथेची वैशिष्ट्ये दिसतात.

#### ३.४.५. 'सूर्यस्तूप' कथांमधील पात्रचित्रण, निवेदन व भाषाशैली -

'सूर्यस्तूप' मधील कथांमधून आलेली पात्रे समकालीन वास्तवातील आहेत. पात्रचित्रण करताना समाजातील विविध स्तरातील माणसांच्या वृत्ती-प्रवृत्ती, स्वभावधर्म व बदलत्या काळात मानवी स्वभावाचे विविध नमुने कथाकारांनी रेखाटली आहेत. 'बर्फाचे घर' या

कथेतील दाजी, 'हिरवं धुकं' या कथेतील महावीर बोधे, 'सामना' कथेतील मल्हारी पेटीमास्तर, 'घरभेदी' या कथेतील पितांबर कांबळे, 'मरीबाचा दरबार' या कथेतील मरीबा पोतराज अशा विविध व्यक्तिचित्रणात समाजातील विविध तऱ्हेची, विविध स्वभावाची माणसे लेखकाने साकारली आहेत. मराठी दलित कथेच्या आजपर्यंतच्या वाटचालीत आत्माराम गोडबोले यांची कथा नवी कथनशक्यता निर्माण करण्याच्या प्रयत्नात आहे. त्यांच्या प्रत्येक कथेचे निवेदन हे परंपरा आणि नवता यांचा समन्वय साधणारे आहे, असे मत डॉ.राजन गवस यांनी नोंदविले आहे.

'सूर्यस्तूप' मधील कथेची भाषा जीवनानुभवाचा प्रत्यय देणारी आहे. प्रमाणभाषेबरोबरच बोली भाषेचा वापर निवेदन व संवादात मोठ्या प्रमाणात केलेला दिसतो. सामान्य माणसाला मध्यवर्ती मानत त्याच्या दुःखाला वाचा फोडण्याचा प्रयत्न या कथेतून होताना दिसतो. कथा लेखकाने स्वानुभावातून आलेले जीवनचित्रण, निवेदन, भाषाशैली यादृष्टीने परंपरा आणि नवता यांचा समन्वय साधलेला दिसतो. दलित समाजातील काही लोकांना शिक्षण, नोकरी, पैसा यामुळे थोडे स्वास्थ्य लाभू लागले. त्यामुळे सहाजिकच आपल्या माणसांबद्दलची सामाजिक बांधिलकी, समाजाबद्दलची आस्था कमी झाली. नव्या पिढीचे बेगडी जीवन आत्माराम गोडबोले यांनी 'सूर्यस्तूप' या कथांमधून चित्रित केले आहे. मिळालेल्या संधीचे चांगल्या गोष्टींमध्ये रूपांतर करून जीवनमान उंचावले पाहिजे, त्यांचे पांढरपेशीकरण होऊ नये, आत्मसंतुष्ट अशी भूमिका त्यांनी स्वीकारू नये याबद्दलची भूमिका सुद्धा अनेक कथांमधून लेखक व्यक्त करतात.

---

### ३.५. सारांश

---

दलित कवितेच्या माध्यमातून दुर्लक्षित राहिलेले एक जग मराठी साहित्यात व्यक्त झाले. माणसांच्या सुख-दुःखसह मानवतेचा व्यापक विचार घेऊन येणारी ही कविता आहे. **सखोल अनुभवविश्व, विलक्षण वास्तव, सहानुभूतीचा विचार आणि भविष्यातील आशावादी दृष्टिकोन** या सर्वच जाणिवांमुळे त्र्यंबक सपकाळे यांची कविता मराठी काव्यपरंपरेत महत्त्वाचे योगदान देते असे म्हणता येईल. युगपुरुष, महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी हजारो वर्षांच्या जुलमी जोखडातून उपेक्षित, दलित समाजाला बंधमुक्त करून स्वातंत्र्य, समता, बंधुता आणि न्यायाचे नवे पंख दिले. आंबेडकरी समाजात त्यामुळे मोठे स्थित्यंतर झाले, पण त्याच वेळी निर्माण झालेल्या नव्या प्रश्नांबद्दल 'आत्मशोध घेऊ पाहणारी' आत्माराम गोडबोले यांची कथा खऱ्या अर्थाने परिवर्तनवादी व प्रबोधनाचा विचार मांडते. **'आता तरी समाजाने स्वशोधातून स्वयंदीप व्हावे'** ही विचार जागृती घडविणे हाच त्यांच्या कथा लेखनाचा हेतू दिसतो. आशय आणि अभिव्यक्तीच्या दृष्टीने या सर्वच कथा मौलिक विचार देणाऱ्या व वाङ्.मयीन गुणविशेषाने वैशिष्ट्यपूर्ण झालेल्या आहेत. लेखकाच्या या कथनशैलीचा व आशय विषयाचा वाचकांच्या मनावर नक्कीच प्रभाव पडतो.

### ३.६. सरावासाठी स्वाध्याय / नमुना प्रश्न -

#### अ. दीर्घोत्तरी प्रश्न

- प्रश्न.१. त्र्यंबक सपकाळे यांच्या 'सुरुंग' मधील कवितांची तुम्हाला जाणवलेली स्वरूप-वैशिष्ट्ये थोडक्यात स्पष्ट करा.
- प्रश्न.२. 'सुरुंग' या त्र्यंबक सपकाळे यांच्या कवितेतील विविध आशयसूत्रे कोणती ते स्पष्ट करा.
- प्रश्न.३. 'सुरुंग' मधील कवितांमधून व्यक्त होणाऱ्या वेदना व विद्रोहाचे स्वरूप थोडक्यात लिहा.
- प्रश्न.४. दलित कवितेच्या परंपरेत 'सुरुंग' मधील कवितेचे तुम्हाला जाणवलेले वेगळेपण आशय व भाषाशैली या अंगाने स्पष्ट करा.
- प्रश्न.५. आत्माराम गोडबोले यांच्या 'सूर्यस्तूप' या कथांमधून व्यक्त झालेल्या समकालीन समाज वास्तवाचे स्वरूप स्पष्ट करा.
- प्रश्न. ६. 'सूर्यस्तूप' या कथांमधून कोण-कोणती आशयसूत्रे व्यक्त होतात, ते थोडक्यात लिहा.
- प्रश्न.७. आत्माराम गोडबोले यांच्या 'सूर्यस्तूप' मधील कथांची महत्त्वाची वैशिष्ट्ये सविस्तर लिहा.
- प्रश्न.८. 'सूर्यस्तूप' कथांमधील पात्रचित्रण, निवेदन व भाषाशैली या अंगाने तुम्हाला जाणवलेले विशेष थोडक्यात लिहा.

#### ब. टिपा लिहा -

१. त्र्यंबक सपकाळे यांच्या कवितेतील विद्रोह.
२. त्र्यंबक सपकाळे यांच्या 'सुरुंग' कवितेतील जीवन जाणिवा.
३. 'सुरुंग' मधील अनुभवविश्वाचे वेगळेपण.
४. 'सुरुंग' या या मधील कवितांचे भाषाविशेष.
५. 'सूर्यस्तूप' मधील कथांची आशयसूत्रे.
६. कथाकार आत्माराम गोडबोले यांच्या कथालेखनामागची भूमिका.
७. 'हिरवं धुकं' या कथेतील जाणीव.
८. 'मरीबाचा दरबार' या कथेतील जीवन संघर्ष.
९. 'सूर्यस्तूप' कथेतील समाज परिवर्तनाचा संदेश.
१०. 'सूर्यस्तूप' या कथेतील निवेदन व भाषाशैली.

#### क. एका वाक्यात उत्तरे लिहा -

१. 'सुरुंग' या काव्यसंग्रहात किती कवितांचा समावेश केला आहे?
२. 'सूर्यस्तूप' कथासंग्रहाच्या लेखकाचे नाव सांगा?
३. महावीर बोधे या सामान्य व्यक्तीची संघर्ष कथा कोणत्या कथेत आलेली आहे?

➤ साधन ग्रंथ :

१. 'सुरंग' ( काव्यसंग्रह)- त्र्यंबक सपकाळे - अस्मितादर्श प्रकाशन, १९७६.
२. 'सूर्यस्तूप' (कथासंग्रह) - प्रा.आत्माराम गोडबोले - डिंपल पब्लिकेशन, २०१६.

➤ संदर्भ ग्रंथ :

१. साहित्य आणि सांस्कृतिक संवेदन, प्रभाकर बागले, शब्दालय प्रकाशन, श्रीरामपूर २०१४.
२. दलित आणि दलितेतरांची कथा : एक अभ्यास, डॉ. श्रीराम गडकर, नवीन उद्योग प्रकाशन, पुणे २०१३.
३. 'प्रदक्षिणा' खंड दुसरा, (संपादन) अनिरुद्ध अनंत कुलकर्णी, कॉन्टिनेन्टल प्रकाशन, १९९९.
४. शतकातील दलित विचार, डॉ.शरणकुमार लिंबाळे, दिलीपराज प्रकाशन प्रा. लि., पुणे जुलै २००९.
५. दलित साहित्य वेदना व विद्रोह - भालचंद्र फडके, श्रीविद्या प्रकाशन पुणे.
६. 'ललित' कथा विशेषांक, ऑगस्ट २०१३.
७. दलित कविता आणि प्रतिमा, महेंद्र भवरे, लोकवाङ्मय गृह, मुंबई.
८. दलित कथा : निर्मिती आणि समीक्षा, डॉ.छाया निकम, सुविद्या प्रकाशन, पुणे.

\*\*\*\*\*